शौर्य और बलिदान की कहानियाँ

शौर्य और बलिदान की कहानियाँ

श्रुति

विद्या विहार, नई दिल्ली

प्रकाशक : विद्या विहार, 1660 कूचा दखनीराय. दरियागंज, नई दिल्ली-110002
सर्वाधिकार : सुरक्षित / संस्करण : 2015 मूल्य : दो सौ रुपए
मुद्रक : इमेजिस प्रिंटैक, दिल्ली iSBN 978-93-80186-47-4

SHAURYA AUR BALIDAN KI KAHANIYAN

by Shruti ₹ 200.00

Published by Vidya Vihar, 1660 Kucha Dakhni Rai, Darya Ganj, New Delhi-2

अपनी बात

प्रिय पाठको!

शौर्य और बलिदान की अनेक कहानियाँ आज भी इतिहास के पन्नों पर गहरी स्याही से लिखी हैं। ये कहानियाँ हैं उन साहसी वीरों की, उन वीरांगनाओं की, जिन्होंने अपनी जान की परवाह किए बिना अपनी मातृभूमि की आजादी के लिए अपना सबकुछ दाँव पर लगा दिया। आज भी जब हम उनकी कहानियाँ पढ़ते हैं अथवा सुनते हैं तो हमारे रोंगटे खड़े हो जाते हैं। हमारे मन में अपनी मातृभूमि के प्रति साहस और वीरता के भाव उत्पन्न होने लगते हैं।

तो आइए, हम ऐसे ही साहसी और वीर बालकों, क्रांतिकारियों, वीरांगनाओं को फिर से इस पुस्तक के माध्यम से याद करें, जिन्होंने अपनी मातृभूमि की खातिर अपना सबकुछ न्योछावर कर दिया। हमें आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि पुस्तक में संगृहीत की गई जाने-अनजाने साहसी पात्रों की कहानियाँ अवश्य ही हमारे बच्चों के अंदर साहस और वीरता की ज्योति जलाएँगी और मातृभूमि के प्रति प्रेम उत्पन्न करने में सहायक होंगी।

वंदे मातरम्।

कहाँ क्या है?

अनोखा बलिदान

धन्य है ऐसी क्षत्राणि जिसने अपना धर्म निभाया,
पति की चिंता की खातिर सर धड़ से काट गिराया।

राजपूत इतिहास में आज भी क्षत्राणियों के शौर्य और साहस की कहानियाँ सुनहरे अक्षरों में अंकित हैं। अपने परिवार, पति के लिए समर्पण की बात हो, चाहे देश पर मर मिटने की, क्षत्राणियों ने हमेशा ही अपने प्राणों का बलिदान देकर अपने पति, परिवार तथा देश के सम्मान की रक्षा की है। इन्हीं क्षत्राणियों में एक नाम रूपनगर की राजकुमारी रूपवती का भी लिया जाता है, जिसके रंग-रूप तथा बुद्धिमानी की चर्चा राज्य में दूर-दूर तक फैली थी।

बात उस समय की है, जब मुगल बादशाह औरंगजेब का राज्य था। औरंगजेब के अधिकार में ही रूपनगर का राज्य भी आता था। राजकुमारी रूपवती के सौंदर्य की चर्चा औरंगजेब के कानों तक पहुँची। राजकुमारी के रूप और सौंदर्य की प्रशंसा सुनकर औरंगजेब संयम न रख सका और तुरंत राजकुमारी से शादी का प्रस्ताव भेज दिया।

औरंगजेब का प्रस्ताव सुनकर राजकुमारी रूपवती को बहुत क्रोध आया। उसने तुरंत अपने कुलपुरोहित द्वारा महाराणा राजसिंह के पास एक पत्र भिजवा दिया। जिसमें लिखा था, "औरंगजेब मुझसे विवाह करना

चाहता है, क्या क्षत्रिय वंश की कन्या किसी भी धर्म के मनुष्य को अपना पति स्वीकार कर सकती है? हे क्षत्रिय वंश के कुलभूषण! मैंने मन-ही-मन आपको अपना पति मान लिया है। यदि आपने मुझे शीघ्र ही स्वीकार नहीं किया तो मैं अपने प्राणों को त्याग दूँगी, जिसका उत्तरदायित्व और पाप आप पर लगेगा।"

राजकुमारी रूपवती के साहस को देखते हुए महाराणा राजसिंह ने तुरंत अपने सेनापति सरदार चूड़ामणि के हाथों राजकुमारी से विवाह की सहमति भिजवा दी।

दोनों ओर से विवाह की तैयारियाँ होने लगीं। इस बात की भनक जब औरंगजेब को लगी तो उसका गुस्सा सातवें आसमान पर पहुँच गया। उसने तुरंत सेनापति को भेजकर महाराणा राजसिंह के राज्य पर चढ़ाई कर दी।

उधर विवाह का मुहूर्त निकट आ रहा था और इस ओर औरंगजेब की सेना आ धमकी थी। महाराणा राजसिंह की चिंता बढ़ने लगी थी। तभी सरदार चूड़ामणि ने महाराणा राजसिंह से आकर कहा, "महाराज! मैं आपकी चिंता का कारण समझ सकता हूँ, लेकिन आप बिलकुल परेशान न हों। आप निश्चिंत होकर राजकुमारी से विवाह करने जाएँ, तब तक मैं औरंगजेब की सेना को रोककर रखता हूँ।"

सरदार चूड़ामणि की बात सुनकर महाराणा राजसिंह का हौसला बढ़ गया, उन्होंने सरदार चूड़ामणि की ओर गर्व से देखा और अपने साथ कुछ

सैनिक लेकर रूपनगर की ओर चल दिए।

सूरज ढलने से पूर्व ही महाराणा राजसिंह राजकुमारी रूपवती से विवाह कर अपने राज्य में आ चुके थे। तब तक सरदार चूड़ामणि ने औरंगजेब की सेना के दाँत खट्टे कर रखे थे। शाम होते ही दोनों ओर की सेनाएँ अपने-अपने खेमे में लौट गईं।

अगले दिन भोर होने से पहले ही महाराणा राजसिंह ने अपनी सेना को युद्ध के लिए आदेश दे दिया और स्वयं भी अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित होकर युद्ध के मैदान की ओर जाने लगे।

महाराणा ने पलटकर एक नजर अपनी नई-नवेली दुलहन के कक्ष की ओर डाली। कक्ष के द्वार पर राजकुमारी रूपवती एकटक अपने पति को निहार रही थी। नई-नवेली पत्नी की आँखों में प्रेम और त्याग देखकर महाराणा घोड़े से उतरे और रानी के कक्ष में आकर बोले, "मुझे क्षमा करना महारानी, अपने मेवाड़ के प्रति इस समय मेरा कर्तव्य ही महत्त्व रखता है। मैं तुम्हारी भावनाओं को समझ सकता हूँ, परंतु मैं विवश हूँ। यह युद्ध औरंगजेब से है, जिसकी शक्ति हमारे मेवाड़ से कहीं अधिक है, फिर भी मैं क्षत्रिय जाति को कलंकित नहीं करूँगा। हो सकता है इस युद्ध में लड़ते-लड़ते मैं जीवित न रहूँ, तब तुम्हारा क्या होगा, मुझे बस यही चिंता रहेगी।"

रानी में साहस और शौर्य कूट-कूटकर भरा था। वह बोली, "हे प्राणनाथ! युद्ध में जाते समय ऐसी बातें नहीं सोचते। क्षत्रिय का तो धर्म ही

युद्ध करना है। और तुम्हें तो स्वयं पर गर्व होना चाहिए कि अपने देश की रक्षा के लिए युद्धभूमि में काम आ रहे हो और जहाँ तक मेरी चिंता का प्रश्न है, उससे आप निश्चिंत रहें। आप हिम्मत और साहस से युद्ध कीजिए। ईश्वर ने चाहा तो विजयी होकर ही लौटेंगे; ईश्वर न करे, आपको युद्ध में कुछ हो गया तो मैं अपने क्षत्रिय धर्म का पालन अवश्य करूँगी।"

रानी के ऐसे जोशीले शब्दों को सुनकर महाराणा राजसिंह में गजब का उत्साह उत्पन्न हो गया। उसने विदा लेते हुए रानी से फिर कहा, "प्रिय! हो सकता है यह हमारी अंतिम भेंट हो, क्योंकि युद्ध में पीठ दिखाकर भागना एक क्षत्रिय को शोभा नहीं देगा और इस समय औरंगजेब की शक्ति हमारी शक्ति से कई गुना अधिक है। इसलिए…।"

कहते हुए महाराणा की आँखें छलक आईं और फिर महाराणा राजसिंह युद्ध के लिए निकल पड़े।

जाते-जाते रास्ते में एक बार फिर महाराणा राजसिंह का मन विचलित हुआ। उन्होंने तुरंत सरदार चूड़ामणि को बुलाकर कहा, "सरदार! तुम अभी रानी के पास जाओ और कहना कि यदि मैं युद्ध से लौटकर न आया तो वह अपने धर्म का पालन अवश्य करें।"

जैसा राणा राजसिंह ने कहा, सरदार चूड़ामणि ने जाकर रानी से कह दिया। अब रानी रूपवती को विश्वास हो गया कि जब तक महाराज का मन मेरी ओर रहेगा, तब तक वह दुश्मनों से युद्ध नहीं कर सकेंगे। अतः

रानी रूपवती ने तुरंत सरदार चूड़ामणि की तलवार निकालकर हाथ में पकड़ते हुए बोली, "सरदार चूड़ामणि! मैं आपको अपना सिर काटकर दे रही हूँ, इसे ले जाकर मेरे स्वामी को देना और कहना कि मैंने अपना पति धर्म पहले ही निभा दिया है, क्योंकि यदि मैं उनके बाद सती होती तो उनके मन में चिंता बनी रहती, जिसके कारण उनका युद्ध में मन ही नहीं लगता।" कहते हुए रानी ने अपना सिर धड़ से अलग कर दिया।

रानी का कटा सिर देखकर महाराणा की आँखों में आँसू भर आए। वह मन-ही-मन सोचने लगे, 'रानी तुम महान् हो, तुम्हारे इस अदम्य साहस को मैं ही नहीं अपितु सारा मेवाड़, सारी क्षत्रिय जाति याद रखेगी।'

आज भी इतिहास के सुनहरे पन्नों में रानी रूपवती 'रानी हाड़ी' के नाम से अमर है और युगों-युगों तक अमर रहेगी।

सारंधा का बलिदान

हार न मानी मुगलों से हो गई स्वयं बलिदान,
युगों-युगों तक याद रहेगा सारंधा तेरा नाम।

बात उस समय की है जब मुगल शासक भारतवर्ष में अपने पैर पसार रहे थे। अनेक राज्यों को बल प्रयोग से अपने अधीन कर लिया था, परंतु टेकड़ी का राज्य अब भी मुगलों की पहुँच से बाहर था। इस राज्य पर हमेशा मुगलों की नजर गड़ी रहती थी। वे समय-समय पर इस राज्य पर आक्रमण करते, परंतु राजा अनिरुद्ध की वीरता और साहस के सामने मुगलों को हमेशा ही मुँह की खानी पड़ती।

अनिरुद्ध सिंह की एक छोटी बहन भी थी, जिसका नाम सारंधा था। सारंधा ने बचपन में ही अस्त्र-शस्त्र संचालन में महारथ हासिल कर ली थी। तीरंदाजी, तलवारबाजी में उसका कोई सानी नहीं था। साहस और शौर्य की इस प्रतिभा की ख्याति आस-पास के राज्य में फैल चुकी थी।

ओरछा राज्य भी टेकड़ी राज्य से जुड़ा हुआ था। वहाँ के राजा चंपतराय भी बहुत बुद्धिमान और साहसी थे। सारंधा की वीरता और साहस के किस्से सुनकर उन्होंने सारंधा से विवाह करने की ठान ली और विवाह का प्रस्ताव लेकर एक सेवक को सारंधा के भाई अनिरुद्ध के पास भेज दिया।

अनिरुद्ध ने ऐसे रिश्ते को ठुकराना उचित नहीं समझा। अतः राजा चंपतराय का रिश्ता स्वीकार कर लिया। कुछ समय पश्चात् ही राजकुमारी सारंधा और चंपतराय का विवाह संपन्न हो गया।

सारंधा से विवाह के पश्चात् राजा चंपतराय ने छोटे-छोटे राज्यों को जीतकर अपने राज्य में मिला लिया। इस कार्य में उनका साथ रानी सारंधा ने भी दिया। अब ओरछा राज्य की शक्ति गई गुना बढ़ गई थी। अतः राजा चंपतराय ने मुगलों की अधीनता स्वीकारने से इनकार कर दिया। मुगल बादशाह ने इसे अपना अपमान माना और उसने ओरछा पर चढ़ाई कर दी।

मुगलों की विशाल सेना के सामने ओरछा राज्य की सेना बहुत ही छोटी थी, लेकिन फिर भी राज़ा चंपतराय और रानी सारंधा ने अपनी वीरता और शौर्य के बल पर मुगलों की सेना को दो बार परास्त किया, लेकिन तीसरी बार राजा चंपतराय हार गए और उन्हें मुगलों की अधीनता स्वीकार करनी पड़ी।

शाहजहाँ ने राजा चंपतराय को एक बड़ी जागीर देकर उनकी बहादुरी और वीरता का सम्मान किया।

समय धीरे-धीरे बीतने लगा। जागीर पाकर चंपतराय निश्चिंत हो गए और विलासिता की ओर बढ़ने लगे। मौज-मस्ती और भोग-विलास में लिप्त रहकर चंपतराय यह भी भूल चुके थे कि वह मुगलों के गुलाम बन चुके हैं।

रानी सारंधा इस बात से बिलकुल प्रसन्न नहीं थी कि उसका पति

किसी मुगल शासक का गुलाम बनकर जीवनयापन करे। वह मन-ही-मन बहुत ही दु:खी रहती और समय-समय पर अपने पति को उकसाती तथा गुलामी का भी आभास कराती रहती थी।

धीरे-धीरे राजा चंपतराय का मन बदलने लगा। उन्हें गुलामी का अहसास हो चुका था। अत: चंपतराय ने मुगलों के खिलाफ बगावत शुरू कर दी। इस बात से नाराज होकर शाहजहाँ के पुत्र दारा ने चंपतराय से जागीर छीन ली। इसके बाद राजा चंपतराय और रानी सारंधा को ओरछा लौटना पड़ा।

कुछ समय पश्चात् शाहजहाँ के पुत्र दारा और औरंगजेब में राजगद्दी को लेकर मतभेद हो गया। औरंगजेब ने दारा और चंपतराय की नाराजगी का लाभ उठाया और चंपतराय से मिलकर दारा पर आक्रमण कर दिया। इस युद्ध में चंपतराय की पत्नी सारंधा ने भी बढ़-चढ़कर भाग लिया और दुश्मन के दाँत खट्टे कर दिए। दारा की सेना को युद्ध का मैदान छोड़कर भागना पड़ा।

चंपतराय और सारंधा की वीरता और साहस को देखकर औरंगजेब बहुत खुश हुआ और चंपतराय को अपनी सेना का सेनापति नियुक्त कर दिया। इस बात से सारंधा भी बहुत खुश थी। अपने पति की वीरता पर सारंधा को गर्व महसूस हो रहा था।

समय बहुत तेजी से आगे बढ़ रहा था। चंपतराय का पुत्र भी अब युवावस्था में पहुँच चुका था। एक दिन वह एक अच्छी नस्ल के घोड़े पर

सैर के लिए जा रहा था। तभी कुछ मुगल सैनिकों ने उसका घोड़ा छीन लिया। जब यह बात रानी सारंधा को पता चली तो उससे रहा न गया। वह तुरंत औरंगजेब के दरबार में पहुँची और औरंगजेब को खूब खरी-खोटी सुना डाली। इस बात को औरंगजेब ने अपना अपमान समझा और चंपतराय तथा सारंधा को कैद करने का आदेश दे दिया।

औरंगजेब की बहुत बड़ी सेना चंपतराय और सारंधा को पकड़ने के लिए निकल पड़ी। यह खबर चंपतराय के कुछ वफादार सैनिकों ने उस तक पहुँचा दी। खबर सुनते ही दोनों सतर्क हो गए और कुछ वफादार सैनिकों को साथ लेकर औरंगजेब की सेना से भिड़ गए।

औरंगजेब की विशाल सेना ने चंपतराय के चंद सैनिकों को पल में ही मौत के घाट उतार दिया, किंतु चंपतराय और रानी सारंधा बड़ी वीरता के साथ दुश्मनों का मुकाबला करते रहे, लेकिन कब तक करते। आखिर मुगलों की सेना ने चंपतराय को बुरी तरह घायल कर दिया।

अपने घायल पति को लेकर रानी सारंधा एक सुरक्षित स्थान पर निकल गई। चंपतराय की हालत इस समय बहुत गंभीर थी। गंभीर अवस्था में चंपतराय रानी सारंधा से बोले, "प्रिय! मैं बुरी तरह घायल हो चुका हूँ, युद्ध में अब तुम्हारा साथ नहीं दे सकता और मैं इन मुगलों के हाथों जिंदा पकड़ा भी न जाऊँ, इसलिए तुम्हें अपने जिगर को थामकर मुझे मृत्यु का दान देना होगा।"

चंपतराय की बात सुनकर रानी सन्न रह गई, लेकिन फिर अगले पल

रानी ने सोचा, मुगलों के हाथों अपनी दुर्दशा से तो अच्छा है कि हम दोनों ही मौत को गले लगा लें। सारंधा ने तुरंत अपनी कटार से पहले अपने पति की छाती पर वार किया और दूसरे ही पल स्वयं को भी मौत को समर्पित कर दिया।

सारंधा का ऐसा साहस देखकर मुगलों की सेना के पैरों तले की जमीन खिसक गई। मुगलों की सेना के सिर उस महान् साहस और वीरता की मूर्ति के आगे नतमस्तक हो गए। स्वयं औरंगजेब ने उन दोनों का हिंदू रीति-रिवाज के साथ अंतिम संस्कार कराया।

इतिहास में रानी सारंधा का नाम आज भी साहस और शौर्य दिखाने वाले महानायकों में लिया जाता है।

बहादुर बेगम

लुटा के सबकुछ आजादी की खातिर दे दी अपनी जान,
सदियों तक हम नहीं भूलेंगे बेगम तेरी शान।

साहस और वीरता के किस्से आज भी जब सुनने और पढ़ने को मिलते हैं तो रोंगटे खड़े हो जाते हैं। अपनी स्वतंत्रता और आजादी के लिए अनेक देशवासियों ने बढ़-चढ़कर भाग लिया, जिनमें राजा, नवाब, जमींदार आदि सब थे। इन्हीं में से एक नाम बेगम हजरतमहल का बड़े आदर के साथ लिया जाता है। अपने साहस और वीरता के कारण बेगम हजरतमहल आज भी इतिहास के पन्नों में अमर हैं।

बात उस समय से संबंध रखती है जब अंग्रेजों के कारण पूरे भारतवर्ष में हाहाकार मचा हुआ था। अनेक रजवाड़ों और नवाबों ने अंग्रेजों की अधीनता सहजता से स्वीकार कर ली थी और जिन्होंने नहीं की, उन्हें अंग्रेजों की सेना ने कुचल दिया।

बेगम हजरतमहल लखनऊ के नवाब वाजिद अली की बेगम थीं। नवाब वाजिद अली बहुत विलासी व्यक्ति थे। वे हमेशा भोग-विलास में डूबे रहते। यहाँ तक कि उन्हें अपने काम-काज से भी कोई सरोकार नहीं था। सारा काम उनके कारिंदे ही देखते थे।

अंग्रेजों ने नवाब वाजिद अली की इसी कमजोरी का फायदा उठाया

और इन्हें गिरफ्तार कर लिया।

इस समय ईस्ट इंडिया कंपनी का राज्य स्थापित हो चुका था। इसका गवर्नर जनरल लॉर्ड डलहौजी बड़ा ही क्रूर तथा अत्याचारी प्रवृत्ति का व्यक्ति था। उसने अनेक राजाओं और नवाबों को अपने अधिकार क्षेत्र में ले लिया था। अतः गर्वनर जनरल लॉर्ड डलहौजी ने नवाब वाजिद अली शाह को भी गिरफ्तार कर नजरबंद कर लिया।

अपनी क्रूर योजना के मुताबिक डलहौजी इनके ग्यारह वर्ष के पुत्र को गद्दी पर बैठाकर इनका राज्य हड़पना चाहता था, लेकिन बेगम हजरतमहल डलहौजी की चाल समझ चुकी थीं। उन्होंने अपने बेटे की ओ़र से लखनऊ शासन की बागडोर अपने हाथों में सँभाल ली और राज्य का काम-काज देखने लगीं।

डलहौजी को यह बात बहुत अपमानजनक लगी, लेकिन बेगम ने इस बात की परवाह किए बिना अपने राज्य का कार्य प्रारंभ कर दिया। जनरल डलहौजी के पास अब तिलमिलाने के सिवाय कुछ भी नहीं रहा।

समय के साथ-साथ अंग्रेजों ने अपनी ताकत बढ़ानी शुरू कर दी थी। पूरा भारत अंग्रेजों की गुलामी की आग में जल रहा था। चारों ओर अंग्रेजों के खिलाफ आंदोलनकारियों ने मोर्चे खोल दिए थे। अंग्रेजों ने अनेक बार लखनऊ का शासन हड़पने का प्रयास किया, किंतु बेगम की सूझबूझ और साहस के आगे उनकी एक न चली।

बड़े-बड़े शहरों, गाँवों में आजादी की मशालें जल चुकी थीं।

जगह-जगह पर क्रांतिकारियों ने अंग्रेजों को मात दे दी। ऐसे में उनकी मदद के लिए बेगम ने अपने खजाने का मुँह खोल दिया। इससे क्रांतिकारियों की हिम्मत दोगुनी हो गई और उन्होंने जगह-जगह से अंग्रेजों को खदेड़ना शुरू कर दिया।

अनेक बार बेगम हजरतमहल ने स्वयं क्रांतिकारियों के साथ मिलकर अंग्रेजों के दाँत खट्टे किए, उनका लखनऊ में रहना मुश्किल कर दिया। यदि समय पर अंग्रेजों को सहायता न मिलती तो पूरे भारत से ही अंग्रेजों का सफाया हो जाता। बदकिस्मती यही रही कि केवल अंग्रेजों को अपने देश से ही नहीं, अपितु हमारे देश से भी उन्हें भरपूर सहायता मिल रही थी। जिससे उनका हौसला बढ़ता ही जा रहा था।

अंग्रेजों की बढ़ती ताकत से क्रांतिकारियों द्वारा बनाया गया 'मुक्ति मोर्चा' धीरे-धीरे टूटने लगा।

अब अंग्रेजों ने अपने पैर जमाने शुरू कर दिए। जिसके कारण मुक्ति मोर्चा के सैनिक इधर-उधर बिखरने लगे। ऐसी स्थिति में बेगम हजरतमहल ने क्रांतिकारियों की एक सभा बुलाकर कहा, "आज हमारे लिए आजादी से बढ़कर कुछ भी नहीं है। भारत माता की आन की रक्षा करना हमारा पहला कर्तव्य है। इसलिए इससे मुँह मोड़ना वतन से गद्दारी कहलाएगा। अतः जब तक हमारे शरीर में लहू का एक कतरा भी मौजूद है तब तक हम अंग्रेजों से डटकर मुकाबला करेंगे। हाँ, यदि इस आजादी की लड़ाई को छोड़कर कोई जाना चाहता है तो शौक से जा सकता है।

यदि मैं अकेली भी रही तो भी इस लड़ाई से मुँह नहीं मोड़ूँगी। मैं अकेली ही अंग्रेजों का सामना करूँगी। लेकिन लखनऊ अंग्रेजों को किसी भी हाल में नहीं दूँगी।"

बेगम हजरतमहल के इस ओजस्वी भाषण ने कुछ पल के लिए जैसे सभी क्रांतिकारियों का खून जमा दिया था। अगले ही पल सारी मुक्ति सेना एकत्रित हो गई और अंग्रेजों का डटकर मुकाबला करने लगी।

लेकिन भाग्य ने बेगम हजरतमहल का साथ नहीं दिया। एक विश्वासघाती ने इनके ही एक जाँबाज तथा वफादार सहयोगी का धोखे

से सिर काटकर अंग्रेजों को दे दिया। जिससे इनकी हिम्मत टूट गई और बेगम अकेली रह गईं।

अंग्रेजों ने अपनी ताकत बढ़ते ही कानपुर, इलाहाबाद, मेरठ, दिल्ली सब जगह क्रांतिकारियों की आवाज को दबा दिया। इसी के साथ मुगल बादशाह बहादुरशाह को गिरफ्तार करके रंगून भेज दिया। हजरत बेगम ने समय की नजाकत को समझा और अपने बेटे को लेकर नेपाल चली गईं।

उधर अंग्रेजी सेना बेगम को गिरफ्तार करना चाहती थी। लेकिन वह भी हाथ मलती रह गईं।

कहते हैं कि बेगम हजरतमहल बड़ी पराक्रमी और साहसी महिला थीं। उन्होंने कभी महल से बाहर कदम तक नहीं रखा था, लेकिन अपने वतन की खातिर घोड़े पर सवार होकर अंग्रेजों से लोहा लिया। आज भी इनकी कब्र काठमांडू में सड़क के किनारे बनी हुई है। कहा जाता है कि इनकी मृत्यु भी काठमांडू में ही हुई थी।

ऐसी वीर और साहसी देशभक्त महिला का नाम आज भी बड़े आदर से लिया जाता है और हमेशा लिया जाता रहेगा। जिसने अपने वतन की आजादी के लिए अपना सबकुछ दाँव पर लगा दिया। देश उस साहसी और वीर महिला को हमेशा याद रखेगा।

तिलका माँझी की वीरता

आदिवासी शेर कहलाया तिलका माँझी नाम,
अंग्रेजों को खूब छकाकर किया महासंग्राम।

सौ वर्षों तक अंग्रेजों ने हमारे देश पर शासन किया और देशवासियों पर अनेक जुल्म ढाए। कुछ ने अंग्रेजों के जुल्मों को सहर्षता से सहन कर उनकी अधीनता स्वीकार कर ली, लेकिन बहुत से ऐसे देशवासी भी थे, जिन्हें अंग्रेजों की गुलामी बिलकुल पसंद नहीं थी। इनमें से तिलका माँझी का नाम आज भी आदर के साथ लिया जाता है।

आदिवासी जाति से संबंध रखने वाले तिलका माँझी चार भाई थे। इनका जन्म भागलपुर जिले के तिलकपुर नाम के एक गाँव में हुआ था।

तिलका माँझी की उम्र उस समय अठारह वर्ष की थी जब उसने अपनी अलग क्रांतिकारी सेना बनाकर अंग्रेजों का सामना किया था। इतना ही नहीं, पहाड़ी जंगलों में छिपकर तिलका माँझी की क्रांतिकारी सेना समय-समय पर अंग्रेजों के दाँत खट्टे करती रहती थी। इसी कारण अंग्रेजी सरकार हाथ धोकर तिलका माँझी के पीछे पड़ी थी।

लेकिन तिलका माँझी भी कम नहीं था। देशभक्ति की भावना उसमें कूट-कूटकर भरी थी। उसने भी अपने इलाके से अंग्रेजी सरकार को उखाड़ फेंकने का इरादा कर लिया था।
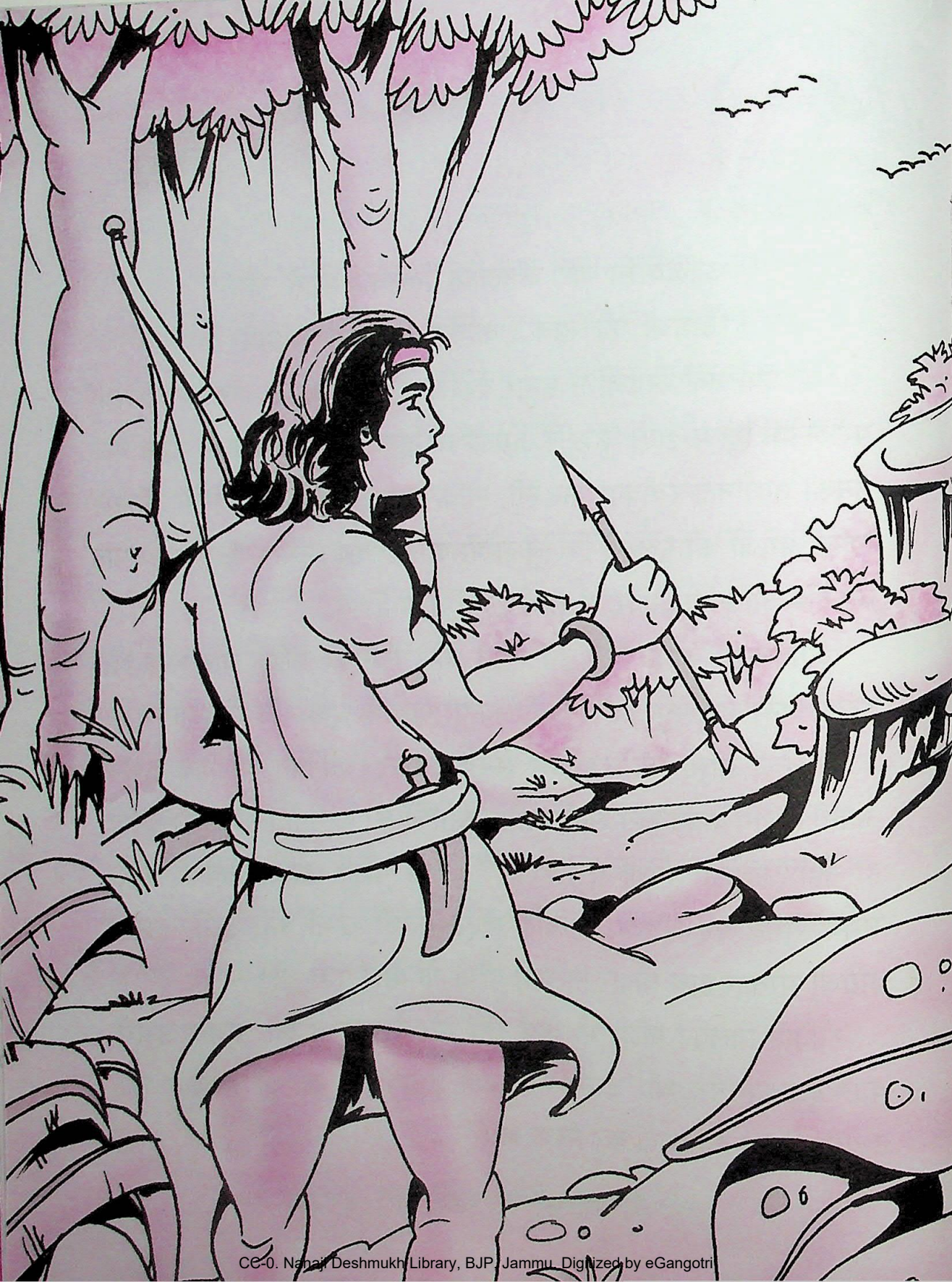
एक दिन एक अंग्रेजी अफसर ने अपनी विशाल सेना के साथ भागलपुर और संथाल के जंगलों को घेर लिया। उसका मकसद था तिलका माँझी को जिंदा या मुरदा पकड़ना, लेकिन तिलका माँझी को पकड़ना मानो लोहे के चने चबाना था।

पहाड़ी जंगल की हर छोटी-बड़ी पगडंडी से तिलका माँझी परिचित था। इसलिए उसे पकड़ना बड़ा मुश्किल काम था, लेकिन अंग्रेज अफसर भी कम हठी नहीं था। उसने अपनी जान की बाजी लगाकर जंगल को चारों ओर से घेर लिया था। जहाँ अंग्रेजी फौज के पास बंदूकें, तोपें, गोला, बारूद था; वहीं तिलका माँझी की सेना के पास मात्र तीर-कमान थे। लेकिन उनका साहस, उनके हौसले; उन तोपों, गोला-बारूदों से कहीं अधिक थे, जिन्हें अंग्रेज तिलका माँझी की तलाश में लेकर घूम रहे थे।

कई दिनों तक जंगलों और पहाड़ों में भटकने पर भी तिलका माँझी का कोई अता-पता नहीं चला। अंग्रेजी फौज को इससे बहुत निराशा हाथ लगी। अतः अंग्रेजी फौज ने वापस लौटने में ही अपनी भलाई समझी।

कुछ समय बाद एक क्रूर अंग्रेज अधिकारी क्वीवलैंड को उस क्षेत्र का कैप्टन बनाकर भेजा तथा तिलका माँझी को बंदी बनाने का कार्य सौंपा गया। क्वीवलैंड अपने कुछ सिपाहियों को लेकर भागलपुर के जंगलों में पहुँच गया। इस बात की खबर तिलका माँझी को भी हो गई थी कि कोई अंग्रेजी अफसर उसकी तलाश में जंगल में घूम रहा है।

तिलका माँझी तो जैसे इसी मौके की तलाश में था। उसने तुरंत अपना

तीर-कमान उठाया और जंगल की ओर चल दिया। तिलका माँझी तीर-कमान लेकर एक विशाल वृक्ष पर बैठकर उस अंग्रेजी अफसर का इंतजार करने लगा।

अभी ज्यादा समय नहीं बीता था कि घोड़े की टापों ने तिलका माँझी का ध्यान अपनी ओर खींच लिया। केवल आठ-दस अंग्रेजी सिपाहियों के साथ क्वीवलैंड उधर से गुजर रहा था। तिलका माँझी ने अवसर पाकर निशाना साध लिया और कमान से तीर छोड़ दिया। तीर सीधा जाकर क्वीवलैंड की छाती में धँस गया, जिससे उसकी वहीं पर मृत्यु हो गई। क्वीवलैंड पर इस प्रकार अचानक हमला होते देख अंग्रेजी सैनिक घबरा गए और जंगल में इधर-उधर भाग गए।

क्वीवलैंड की मृत्यु से अंग्रेजों को बड़ा आघात पहुँचा। उन्होंने तिलका माँझी को हर हाल में पकड़ने का निश्चय कर लिया।

अंग्रेजी अफसरों ने एक बड़ी सेना लेकर भागलपुर की उस पहाड़ी को घेर लिया, जहाँ पर तिलका माँझी अपनी टोली के साथ लड़ाई की योजना बनाया करता था।

अंग्रेजों के इस अचानक हुए हमले से तिलका माँझी बिलकुल अनजान था, लेकिन उसने अपनी वीरता और साहस का परिचय देते हुए सैकड़ों अंग्रेजों को मौत के घाट उतार दिया। इस लड़ाई में तिलका माँझी के तीन भाई तथा सौ से अधिक आदिवासी भी शहीद हो गए।

तीन दिनों तक युद्ध चलने के पश्चात् अंग्रेजों ने तिलका माँझी को

बंदी बना ही लिया। तिलका माँझी को घोड़े की पूँछ से बाँधकर भागलपुर की सड़कों पर सरेआम घसीटा गया, लेकिन तिलका माँझी के मुँह से उफ तक नहीं निकली। इस पर भी अंग्रेजों की तसल्ली नहीं हुई तो तिलका माँझी को एक बरगद के पेड़ से उलटा लटका दिया गया। दिन-रात पेड़ से उलटा लटकने पर दो दिन पश्चात् तिलका माँझी ने दम तोड़ दिया और इसी के साथ उस महान् आदिवासी और साहसी योद्धा का अंत हो गया।

आजादी की लड़ाई के प्रथम चरण का यह शूरवीर और साहसी योद्धा आनेवाले क्रांतिकारियों के लिए प्रेरणा बन चुका था। अपनी मातृभूमि की रक्षा के लिए प्राण न्योछावर करनेवाला यह साहसी युवक इतिहास में अमर हो गया। जहाँ पर तिलका माँझी को लटकाया गया था, भागलपुर वासियों ने वहाँ तिलका माँझी की एक विशाल मूर्ति भी स्थापित की है। लोग आज भी भागलपुर की उस मिट्टी को अपने माथे पर लगाने में गर्व महसूस करते हैं, जहाँ तिलका माँझी ने अपने प्राणों का बलिदान किया था।

साहसी मैना

नाम था जिसका मैना पर थी सिंह समान,
अंग्रेजों की जड़ें हिलाकर किया देश में नाम।

देश पर मर मिटने वालों की न तो कभी कमी थी और न ही कभी रहेगी। न जाने कितने ही वीर बाँकुरों ने अपने देश पर जान और माल की बाजी लगा दी थी। ऐसी ही एक क्रांतिकारी एवं साहसी लड़की थी, जिसका नाम था 'मैना'। मैना उसका नाम अवश्य था, लेकिन वह किसी सिंहनी से कम नहीं थी। तीर-तलवार चलाने में उसका जवाब नहीं था। यदि गलती से कोई उससे टकरा जाए तो उसे दिन में तारे दिखा देती थी।

यह लड़की कोई और नहीं बल्कि नाना साहिब की दत्तक पुत्री थी, जिसे सब प्यार से मैना कहकर पुकारते थे।

उस समय देश में चारों ओर क्रांतिकारियों की अंग्रेजी फौजों से भिड़ंत चल रही थी। कानपुर के क्रांतिकारियों ने मिलकर नाना साहब को कानपुर की गद्‌दी पर बैठा दिया था। अगले ही दिन कुछ क्रांतिकारी मिलकर अंग्रेज महिलाओं और बच्चों को बंधक बनाकर दंड देने के लिए नाना साहिब के पास लाए।

लेकिन नाना साहब ठहरे सच्चे भारतीय। उन्हें यह बात जरा भी स्वीकार नहीं थी कि निहत्थे स्त्री और बच्चों पर अत्याचार किया जाए।

नाना साहिब बोले, "निहत्थे स्त्रियों तथा बच्चों को मारना कायरता ही नहीं अपितु महापाप है। अतः इन्हें छोड़ दो, क्योंकि ऐसा महापाप करने पर इतिहास हमें कभी क्षमा नहीं करेगा।"

नाना साहिब ने उन स्त्रियों और बच्चों को सुरक्षित स्थान पर पहुँचाने की जिम्मेदारी मैना को सौंप दी और कहा, "बेटी मैना! मैं यह कार्य तुमको सौंप रहा हूँ, क्योंकि मैं जानता हूँ, तुम इस कार्य को भली-भाँति पूरा कर सकोगी। तुम्हें इन स्त्री और मासूम बच्चों को किसी सुरक्षित स्थान पर पहुँचाना है।" कहकर नाना साहब बिठूर के लिए रवाना हो गए।

स्त्री और बच्चों को लेकर मैना अपने अंगरक्षकों के साथ किसी सुरक्षित स्थान की ओर चल दी। अभी वह कुछ ही दूर पहुँच पाई थी कि एक गुप्तचर ने आकर सूचना दी कि नाना साहिब के जाते ही अंग्रेजी फौज ने कानपुर पर चढ़ाई कर दी है। अंग्रेजी सैनिकों ने क्रांतिकारियों के स्त्री और बच्चों पर अत्याचार करने शुरू कर दिए तथा महिलाओं की बेइज्जती करनी भी शुरू कर दी। यहाँ तक कि दुधमुँहे बच्चों को भी नहीं बख्शा।

गुप्तचर की बात सुनते ही मैना का चेहरा लाल हो गया, गुस्से में तमतमाने लगी। उसने अंग्रेजों की स्त्रियों और बच्चों को घूरकर देखा और बोली, "तुम चिंता मत करो। पहले हम इन्हें किसी सुरक्षित स्थान पर छोड़ आएँ, फिर इन अंग्रेजों की खबर लेती हूँ।"

अभी मैना की बात पूरी भी नहीं हुई थी कि अंग्रेजों की एक टुकड़ी ने आकर मैना व उसके अंगरक्षकों को घेर लिया। कुछ ही देर में उन्होंने

मैना के अंगरक्षकों को मारकर मैना को बंदी बना लिया।

अब अंग्रेजों को पता चल चुका था कि मैना नाना साहिब की दत्तक पुत्री है। अंग्रेज इस बात से बहुत खुश हुए, क्योंकि वह जानते थे कि क्रांतिकारियों तक पहुँचने का यह बहुत ही आसान तरीका होगा। उन्होंने मैना को हर प्रकार का लालच दिया कि वह क्रांतिकारियों का ठिकाना बता दे, लेकिन मैना टस-से-मस नहीं हुई। इस पर अंग्रेज अधिकारी तिलमिला गए और उन्होंने मैना को पेड़ से बाँधकर यातनाएँ देनी शुरू कर दीं।

अनेक यातनाएँ सहकर भी मैना ने क्रांतिकारियों के ठिकाने बताने से इनकार कर दिया। प्यास के कारण मैना का गला सूखने लगा। वह पानी माँगती रही, लेकिन अंग्रेज अधिकारियों ने उसकी एक न सुनी और हंटर से उसकी खाल उधेड़ते रहे।

मैना के अंग-अंग से खून की बूँदें टपक रही थीं। शरीर पर पहने कपड़े तार-तार हो चुके थे, लेकिन जालिम अंग्रेजों को उस पर तनिक भी दया नहीं आ रही थी। वे उसे और भी भयंकर-से-भयंकर यातनाएँ देते रहे।

प्यासी मैना पानी के लिए तड़पती रही, लेकिन अंग्रेज थे कि उसकी ऐसी स्थिति पर हँस रहे थे।

अंत में जब अंग्रेज हर प्रयास करके हार गए तब उन्होंने जिस पेड़ के साथ मैना को बाँधा था, उस पेड़ के चारों ओर लकड़ियाँ इकट्ठी करके आग लगा दी।

धीरे-धीरे आग की लपटों ने विकराल रूप ले लिया। मैना का शरीर आग की गरमी से तपने लगा। शायद यही मैना के धैर्य और साहस की परीक्षा थी। आग में तपने के बाद भी उसने अपने साथी क्रांतिकारियों का पता बताने के लिए मुँह नहीं खोला।

"अब भी समय है लड़की, अपने साथियों का पता बता दे, वरना तुझे जिंदा जला देंगे।" एक अंग्रेज अधिकारी ने मैना पर गरजते हुए कहा।

मैना बोली, "तुम शायद हम हिंदुस्तानियों की फितरत से अनजान हो। अपने देश के लिए हम अपनी जान पर भी खेल जाते हैं। तुम क्यों अपना समय बरबाद कर रहे हो। तुम्हें जो करना है करो, मेरा मुँह खुलवाना तुम्हारे बस की बात नहीं है।" कहते हुए मैना ने उस अफसर के मुँह पर थूक दिया।

मैना के शब्दों को सुनकर अंग्रेज अफसर तिलमिला उठा। उसका इतना बड़ा अपमान शायद ही जीवन में कभी हुआ था।

आग अब पूरी तरह विकराल रूप ले चुकी थी। मैना ने कसकर अपने होंठों को भींच लिया था। आग की लपटें धीरे-धीरे मैना के जिस्म को झुलसा रही थीं, लेकिन मैना के मुँह से एक चीख भी नहीं निकली।

ऐसा विकराल दृश्य देखकर अंग्रेजों की स्त्री और बच्चों की आँखों में आँसू छलक आए, लेकिन वे भी कुछ नहीं कर सकते थे। अतः उन्होंने भी चुप रहने में ही भलाई समझी।

धीरे-धीरे मैना आग की लपटों में समा गई, लेकिन अंतिम समय तक

भी उसने अपने क्रांतिकारी भाइयों का पता अंग्रेजों को नहीं बताया। साहस और बलिदान की ऐसी मिसाल शायद ही कहीं और देखने को मिले। भारत के इतिहास में मैना ने अपना नाम सुनहरे अक्षरों में लिखवा दिया था। सोलह वर्ष की कम आयु में ही मैना क्रांतिकारी इतिहास में अमर हो गई। इस साहसी और वीर बाला को भारतवर्ष हमेशा याद रखेगा।

साहसी बालक

बचपन में ही देश की खातिर दे दी अपनी जान,

गुरुमुख तुझको याद करेगा सारा हिंदुस्तान।

आजादी के दीवानों ने जब पंजाब में क्रांति का बिगुल बजाया तो अंग्रेजों की जड़ें हिल गईं। आजादी के इन दीवानों में नामधारी समुदाय ने आजादी की लड़ाई में बहुत बढ़-चढ़कर भाग लिया। अपनी युद्ध नीति से इस संप्रदाय ने अंग्रेजी फौजों को अनेक बार धूल चटाई।

नामधारी समुदाय के संस्थापक रामसिंह कूका थे। ईश्वर के अनन्य भक्त होने के कारण वैसे तो वे भक्ति और साधना में लीन रहते। दूसरों पर अत्याचार, दूसरों का निरादर, लड़ाई, झगड़ा, बेईमानी आदि के वे बहुत खिलाफ थे। इसलिए अंग्रेजों की नीति उन्हें कभी भी पसंद नहीं आई और वे उनके खिलाफ संघर्ष करने लगे।

रामसिंह कूका ने अंग्रेजों के खिलाफ असहयोग आंदोलन शुरू कर दिया। इस असहयोग आंदोलन में बच्चे, बूढ़े, जवान और महिलाएँ भी शामिल थीं। इस आंदोलन में जहाँ सरकारी नीतियों का विरोध किया जाता था, वहीं विदेशी वस्तुओं और सेवाओं का बहिष्कार भी किया जाता था।

पाँच वर्षों तक कूकाओं ने अंग्रेजों से छिप-छिपकर लड़ाइयाँ लड़ीं। बाद में जब इनकी शक्ति बढ़ गई तो यह समुदाय खुलकर सामने आने

लगा। जिस कारण यह समुदाय अंग्रेजों की आँखों में दिन-रात खटकने लगा।

धीरे-धीरे नामधारी समुदाय की ताकत और सदस्यता बढ़ने लगी। अतः इन्होंने पंजाब प्रांत को बाईस भागों में बाँट दिया। अलग-अलग भागों में एक-एक मुखिया को नियुक्त कर दिया गया। जिनका कार्य अस्त्र-शस्त्र एकत्रित करना तथा भारतीय क्रांतिकारियों की मदद करना था।

इस समुदाय की एक अलग बोली थी। 'कूक' की आवाज के साथ ये अपने साथियों को एकत्रित किया करते थे। इसलिए यह 'कूका समुदाय' के नाम से जाना जाता था।

इसी समुदाय में एक तेरह वर्ष का बालक गुरुमुख सिंह भी था। जिसके साहस और शौर्य पर पूरे समुदाय को गर्व था। गुरुमुख सिंह ने कई बार आगे बढ़कर अंग्रेजों से लोहा लिया था। मात्र तेरह वर्ष की आयु में ही उसने साहस औंर बहादुरी के इतने कार्य कर दिए थे कि कूका समुदाय में वह सबका चहेता बन गया था।

गुरुमुख के माता-पिता हमेशा चिंतित रहते थे कि न जाने यह लड़का क्या गुल खिलाएगा। न पढ़ता है न लिंखता है, दिन-रात संगत में गुजार देता है, लेकिन गुरुमुख को तो जैसे अंग्रेजों के खिलाफ लड़ने में आनंद मिलता था। चाहे लड़ाई रात में हो अथवा दिन में, छिपकर लड़ना हो या आमने-सामने की लड़ाई हो, गुरुमुख हमेशा आगे ही रहता था।

अंग्रेजों को भी जब गुरुमुख के साहस और हौसले का पता चला तो

उन्होंने गुरुमुख पर कड़ी नजर रखनी शुरू कर दी, लेकिन गुरुमुख तो जैसे कोई बालक न होकर भूत-प्रेत हो। कब आता, कब जाता, अंग्रेजों को भनक भी नहीं लगती थी और वह अपना काम करके गायब हो जाता था।

एक दिन 'कूका' क्रांतिकारियों ने गाय काटने वाले बूचड़खाने पर धावा बोल दिया। अचानक किसी की सूचना पर वहाँ अंग्रेजी फौज भी आ गई। दोनों में डटकर मुकाबला हुआ। अंग्रेजों की फौज अधिक होने के कारण 'कूका' क्रांतिकारी अधिक समय तक उनका सामना न कर सके और अंग्रेजों की फौज ने 'कूका' क्रांतिकारियों को गिरफ्तार कर लिया।

गिरफ्तार किए गए कूका क्रांतिकारियों में तेरह वर्ष का बालक गुरुमुख भी था। जब क्रांतिकारियों को अंग्रेज अफसर के सामने लाया गया तो सबसे आगे गुरुमुख सीना ताने खड़ा था। अंग्रेज अधिकारी ने चुटकी लेते हुए अपने फौजियों से कहा, "अरे, तुम इस बच्चे को क्यों पकड़ लाए, अभी तो इसके दूध के दाँत भी नहीं टूटे होंगे। यह हमारे फौजियों से क्या लड़ा होगा?"

"नहीं सर! यह बालक नहीं है, बहुत बड़ा जलजला है। इसने अपनी कृपाण से हमारे आठ सैनिकों को काट दिया है।" एक फौजी बोला।

"खामोश! हमसे मजाक करता है। क्या हम इतना भी नहीं जानता कि इतना छोटा बालक क्या कर सकता है? तुम हमको बेवकूफ बनाता है।"

अंग्रेज अधिकारी गुस्से में लाल-पीला होकर बोला।

सभी कूका विद्रोहियों को काल कोठरी में डाल दिया गया। अगले दिन सभी को एक निर्जन स्थान पर ले जाया गया। यह वही स्थान था, जहाँ पर अंग्रेजों की खिलाफत करनेवाले भारतीयों को तोपों से बाँधकर उड़ाया जाता था। यहाँ मैदान की मिट्टी दूर-दूर तक लाल रंग की दिखाई पड़ रही थी।

अंग्रेज अफसर का आदेश हुआ और सिपाही एक-एक करके कूका विद्रोहियों को तोप से उड़ाने लगे।

यह भयानक नजारा देखकर गुरुमुख की आँखों में खून उतर आया था। उसने तुरंत अंग्रेज फौजियों से अपने दोनों हाथ छुड़ाए और उस अंग्रेज अफसर की ओर दौड़ा, जो क्रांतिकारियों को तोप से उड़ाने की सजा सुना रहा था।

गुरुमुख ने अपने दोनों हाथों से अंग्रेज अफसर की दाढ़ी कसकर पकड़ ली। अफसर तिलमिला उठा। यह काम गुरुमुख ने चीते की फुरती से किया। जितने भी अंग्रेज अधिकारी, फौजी खड़े थे, गुरुमुख की फुरती देखकर दंग रह गए।

अंग्रेज अफसर दर्द से चिल्ला रहा था और गुरुमुख उसकी दाढ़ी को पूरे जोर से झिंझोड़ रहा था। आखिर जब अंग्रेज अफसर से सहा नहीं गया तो उसने तलवार से गुरुमुख के दोनों हाथ काट दिए। तब कहीं उसकी दाढ़ी आजाद हो पाई।

अंग्रेजी फौज ने तुरंत गुरुमुख को पकड़कर तोप से बाँध दिया। कराहते हुए उस अंग्रेज अफसर ने उसे तोप से उड़ाने का आदेश सुना दिया।

कुछ ही पल में तोप की भयानक गर्जना से उस तेरह वर्ष के वीर, साहसी तथा क्रांतिकारी बालक के चीथड़े आकाश में बिखर गए। धरती खून से और भी लाल हो गई।

इस बालक के साहस और बलिदान को भारतवर्ष हमेशा याद रखेगा।
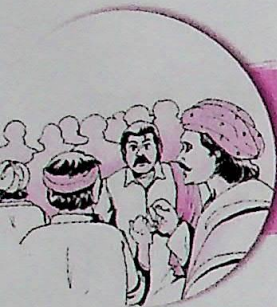
चापेकर बंधुओं की वीरता

देकर सजा गद्दारों को काम देश के आए,
धन्य हो ऐसा भातृ-प्रेम बंधु चापेकर कहलाए।

साहस और बलिदान का जब भी कभी जिक्र आता है तो चापेकर बंधुओं का नाम बड़े आदर और सम्मान के साथ लिया जाता है। चापेकर बंधु तीन भाई थे–दामोदर हरि, बालकृष्ण और वासुदेव।

इन तीनों भाइयों ने स्वतंत्रता आंदोलन के प्रथम चरण में बढ़-चढ़कर भाग लिया।

बात उस समय की है जब महाराष्ट्र में प्लेग एक महामारी की तरह पैर पसार रहा था। अंग्रेज अधिकारी रैंड की नियुक्ति वहाँ की गई थी, ताकि प्लेग की रोकथाम की जा सके और वहाँ के निवासियों को बचाया जा सके, लेकिन रैंड ने इसके विपरीत कार्य किया। प्लेग से बचाव के बहाने रैंड ने कैंप में ले जाकर लोगों को मरवाना शुरू कर दिया। प्लेग मरीजों की तलाशी के बहाने वह औरतों और बच्चों पर जुल्म करता और उनकी बेइज्जती करता था।

यह बात जब चापेकर बंधुओं के कानों में पहुँची तो उन्होंने इस अधिकारी से बदला लेने तथा इसे सबक सिखाने की ठान ली।

उस समय अंग्रेज मराठा ब्राह्मणों को सेना में भरती नहीं करते थे।

इसलिए दामोदर ने अपना एक अलग ट्रेनिंग कैंप बनाया। यह कैंप अलग तरह का था, जहाँ पर लोग कसरत किया करते तथा लाठी, भाला, बरछी चलाना सीखते थे। लोगों को इसी कैंप में गुपचुप तरीके से अंग्रेजों के विरुद्ध तैयार भी किया जाता था।

विक्टोरिया हीरक जयंती पर रैंड को मारने की योजना बनाई गई। अपनी योजनानुसार समारोह से लौटते हुए दामोदर ने रैंड पर ताड़बतोड़ गोली चला दी, जिसके कारण रैंड ने घटनास्थल पर दम तोड़ दिया। दामोदर मौका पाकर भागने में कामयाब हो गया। जब यह बात अंग्रेज सरकार तक पहुँची तो उसने तीनों भाइयों पर दस हजार का इनाम घोषित कर दिया।

कहते हैं कि लालच बहुत बुरी बला है। न तो इसे अपना दिखाई देता है और न ही पराया। ठीक वैसा ही दामोदर बंधुओं के साथ भी हुआ। दामोदर का एक साथी इनाम के लालच में पुलिस का मुखबिर बन गया और उसने पुलिस को दामोदर का ठिकाना बता दिया, जिससे दामोदर और बालकृष्ण दोनों भाइयों को पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया।

वासुदेव के खिलाफ सबूत न मिलने के कारण उन्हें छोड़ दिया गया, लेकिन थाने में हाजिरी देने उन्हें प्रतिदिन जाना ही पड़ता था। अंग्रेजों के काफी समझाने पर वासुदेव ने उनकी मुखबिरी करना स्वीकार कर लिया।

लेकिन बात कुछ और ही थी। वासुदेव जानना चाहते थे कि वह गद्दार कौन है, जिसने मेरे भाइयों को पकड़वाया था। वे उसे ऐसी

भयानक सजा देना चाहते थे कि आनेवाली पीढ़ी कभी गद्दारी करने की सोचे भी नहीं।

पूरे महाराष्ट्र में यह खबर आग की लपटों की तरह फैल गई कि महान् क्रांतिकारी दामोदर का भाई वासुदेव अंग्रेज सरकार का मुखबिर बन गया। क्रांतिकारियों ने वासुदेव को बहुत धिक्कारा, उसे गद्दार तथा देशद्रोही कहा। लेकिन वासुदेव के मन में कुछ और ही चल रहा था, जिसे शायद महाराष्ट्र की जनता नहीं जानती थी।

गद्दार का जैसे ही पता चला तो वासुदेव ने तुरंत उसके घर जाकर उसे गोलियों से भूनकर उसकी लाश बीच चौराहे पर लटका दी और लिख दिया–'वतन से गद्दारी करने वालों का यही अंजाम होगा।'

पुलिस को जैसे ही इस कांड की सूचना मिली, वह तुरंत वासुदेव को पकड़ने उसके घर निकल पड़ी। गद्दार को सजा देकर वासुदेव चैन की साँस ले रहा था। उसे भी इंतजार था कि मुझे पकड़ने वही अफसर आएगा, जिसने मेरे दोनों भाइयों को पकड़ा है।

कुछ ही देर में वासुदेव को पुलिस ने चारों ओर से घेर लिया। वहीं पुलिस अफसर वासुदेव को पकड़ने आया था, जिसने उसके दोनों भाइयों को पकड़ा था। उसे देखते ही वासुदेव का चेहरा गुस्से से लाल हो गया। उसने अपने रिवॉल्वर की सारी गोलियाँ उस पुलिस अधिकारी पर झौंक दीं, लेकिन उसकी किस्मत अच्छी रही कि वह बच गया।

पुलिस ने वासुदेव को गिरफ्तार कर लिया। उसे भी उसके भाइयों के साथ काल कोठरी में डाल दिया गया।

कुछ दिन बाद तीनों भाइयों को सजा के लिए कोर्ट ले जाया गया। वहाँ वासुदेव ने सारी बात अदालत को सच-सच बता दी, क्योंकि वह भी अपने भाइयों के साथ अपनी भारतमाता की रक्षा के लिए फाँसी पर झूलना चाहता था।

तीनों भाइयों ने साहस और बहादुरी का परिचय देते हुए अपने देश की खातिर प्राणों का बलिदान दे दिया।

मृत्यु से पूर्व दामोदर के हाथों में गीता थी। गीता को अपने हाथों में लेकर ही दामोदर फाँसी के फंदे पर झूल गए। अंग्रेज उसके बाद भी उनके हाथों से गीता नहीं छुड़वा सके। मरने का साहस और हिम्मत

देखकर अंग्रेज अधिकारी भी दंग रह गए थे।

भारत देश ने अपने तीन साहसी और वीर क्रांतिकारी खो दिए थे। भला इससे बड़ा दुर्भाग्य और क्या हो सकता था, लेकिन एक बूढ़ी औरत ऐसी भी थी, जिसके आँसू पोंछनेवाला अब कोई भी नहीं था। वह थी उन चापेकर बंधुओं की माँ।

अपने तीनों बेटों को एक साथ खोकर भी वह अपने आप पर गर्व महसूस कर रही थी कि उसने ऐसे पुत्रों को जन्म दिया। यदि उसके और बेटे होते तो अपने देश के लिए वह उन्हें भी शहीद कर देती। धन्य है ऐसी माँ, जिसने ऐसे बेटों को जन्म दिया, जो अपनी जान की परवाह किए बिना ही देश के लिए शहीद हो गए।

ऐसे साहसी क्रांतिकारी इतिहास में बहुत कम होते हैं, जो अपने देश के लिए सबकुछ दाँव पर लगा देते हैं। गद्दार को सजा देकर देश-प्रेम तथा भाई-प्रेम की अनूठी मिसाल बनकर चापेकर बंधु इतिहास में अमर हो गए।

साहसी अनंत कान्हरे

खुशी से लगा गले मौत को किया देश का नाम,
युगों-युगों तक याद रखेगा तुमको हिंदुस्तान।

साहस और शौर्य के बल पर अनेक वीर बालकों ने अपनी मातृभूमि को मुक्त कराने के लिए आजादी की लड़ाई में बढ़-चढ़कर भाग लिया। ऐसे ही कुछ महान् युवा और साहसी क्रांतिकारियों में बालक अनंत कान्हरे का नाम बड़े ही सम्मान के साथ लिया जाता है।

मात्र सत्रह वर्ष की उम्र में ही साहसी अनंत कान्हरे ने अंग्रेजों के दाँत खट्टे करके अपनी मातृभूमि की रक्षा के लिए अपने प्राणों की बाजी लगा दी थी।

भारतीयों की 'विदेशी वस्तु बहिष्कार' नीति ने जब विशाल आंदोलन का रूप धारण कर लिया तो पूरे देश में विद्रोह की आग तेजी से भड़क उठी। यहाँ तक कि कलेक्टर जैक्सन की हत्या भी इसी आंदोलन के कारण कर दी गई थी।

देश में जब चारों ओर क्रांतिकारियों की गुप्त सभाएँ चल रही थीं, अंग्रेजों की नीति के खिलाफ एकजुट अभियान चलाया जा रहा था। तभी अंग्रेज सरकार ने जैक्सन नाम के क्रूर अफसर की नियुक्ति कर दी। कठोर दमन नीति तथा अपनी क्रूर प्रवृत्ति के कारण जैक्सन काफी

बदनाम था। 'वंदे मातरम्' का वह कट्टर विरोधी था। यदि उसके कान में 'वंदे मातरम्' की भनक भी पड़ जाती तो बस्तियों को ही उजाड़ देता था। कोई देशभक्ति की भावना प्रकट करता तो उसे जेल में डाल देता।

जैक्सन की क्रूरता दिन-प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही थी। एक दिन वह शाम के समय मैदान में गोल्फ खेल रहा था। तभी उसकी गेंद उछलकर एक किसान की बैलगाड़ी के नीचे आ गई। किसान का गेंद पर ध्यान नहीं गया और वह अपनी गाड़ी लेकर आगे चल दिया। तभी जैक्सन ने अपने सिपाहियों को भेजकर उस किसान को इतने कोड़े लगवाए कि उसने वहीं पर दम तोड़ दिया।

किसान का कसूर केवल इतना ही था कि उसने गेंद उठाकर नहीं दी थी।

अपने साथियों के साथ दूर खड़ा अनंत कान्हरे यह सबकुछ देख रहा था। वैसे तो अंग्रेजों को अनेक बार उसने धूल चटाई थी, लेकिन अब भी उसके अंदर अंग्रेजों के प्रति एक भयंकर ज्वालामुखी धधक रहा था। उसने अपने मन में निश्चय कर लिया था कि जब तक मैं जैक्सन से इस मासूम किसान की हत्या का बदला नहीं ले लेता, तब तक चैन से नहीं बैठूँगा।

समय धीरे-धीरे बीतता गया। अनंत कान्हरे के कानों में प्रतिदिन कोई-न-कोई जुल्म की कहानी सुनाई पड़ती, जिसे वह क्रूर जैक्सन जन्म देता था। उससे बदले की आग अब और भी भयंकर होती जा रही थी।

अनंत कान्हरे ने अपने सभी साथियों को एकत्रित किया। उसके सभी साथी एक जगह खेल-कूद और व्यायाम करते थे। जिसके कारण सभी हृष्ट-पुष्ट थे। साहसी और निडर किशोरों की एक टोली बनाकर अनंत कान्हरे ने उसके मुखिया की बागडोर सँभाल ली। इस टोली का बस एक ही मकसद था—क्रूर जैक्सन की मौत।

अनंत कान्हरे ने अपने सभी साथियों को जैक्सन की अच्छी प्रकार से पहचान करा दी, ताकि कोई चूक न हो। योजना के मुताबिक नासिक के विजयानंद थियेटर में जैक्सन को मौत के घाट उतारना था, क्योंकि कुछ दिन बाद उस थियेटर में 'शारदा नाटक' का शो होनेवाला था, जिसमें जैक्सन को मुख्य अतिथि बनाया गया था।

उस दिन अनंत कान्हरे पहले ही अपने साथियों के साथ मिलकर थियेटर में तैयारी कराने लगा था। वेशभूषा ऐसी थी कि कोई पहचान भी न पाए।

धीरे-धीरे सभी नाटक-प्रेमी सभागार में एकत्रित होने लगे थे। विजयानंद थियेटर को अच्छी तरह सजाया गया था। मुख्य अतिथि तथा विशिष्ट अतिथियों के स्वागत के लिए फूलों की बड़ी-बड़ी मालाएँ रखी हुई थीं। सभागार की अगली पक्तियाँ केवल मुख्य अतिथि तथा विशिष्ट अतिथियों के लिए सुरक्षित छोड़ी गई थीं।

सभागार में दर्शक अपने-अपने स्थान पर बैठ चुके थे। सभी की नजरें सामने की ओर गड़ी थीं कि कब मुख्य अतिथि आएँ और नाटक शुरू हो।

लेकिन किसी को भी खबर नहीं थी कि मुख्य दरवाजे के सामने एक कोने में तीन युवक किसका इंतजार कर रहे हैं? सभी यह समझ रहे थे कि शायद थियेटर में काम करनेवाले कारिंदे हैं, लेकिन उन्हें तो इंतजार था उस क्रूर जैक्सन का जिसकी मौत आज उनके हाथों होनी थी।

तभी एक लंबी सी काली गाड़ी दरवाजे पर रुकी। गेट पर लगी फोकस लाइट तुरंत उस गाड़ी पर पड़ी। लाइट पड़ने पर गाड़ी और भी चमकदार लग रही थी। दरबान ने तुरंत गाड़ी का दरवाजा खोला। गाड़ी का दरवाजा खुलते ही एक लंबा-चौड़ा अंग्रेज गाड़ी से बाहर निकला और सभागार की ओर बढ़ने लगा।

धाँय…धाँय…धाँय…। एक साथ कई गोलियों की आवाज से सभागार गूँज उठा। दर्शकों की समझ में नहीं आ रहा था कि यह गोलियों की आवाज है अथवा मुख्य अतिथि के स्वागत में छोड़े गए पटाखे।

गोलियों की आवाज सुनकर अंग्रेज फौज तुरंत हरकत में आ गई। सभागार को चारों ओर से घेर लिया गया, लेकिन सबकुछ व्यर्थ ही था, क्योंकि क्रूर जैक्सन ने कुछ पल छटपटाते हुए ही दम तोड़ दिया था।

अंत में अनंत कान्हरे तथा उसके साथियों को गिरफ्तार कर लिया गया। साहस का परिचय देते हुए अनंत कान्हरे तथा उनके साथियों ने अपना अपराध स्वीकार कर लिया। जैक्सन के कत्ल के आरोप में उन सभी को फाँसी की सजा सुनाई गई।

फाँसी के दिन अनंत कान्हरे के 'वंदे मातरम्' के नारों से पूरा

आकाश गूँज रहा था। अंग्रेजों के दिल दहल रहे थे कि जिस देश में ऐसे साहसी, वीर क्रांतिकारी पैदा होते हों, वहाँ अधिक समय तक राज करना मुश्किल है।

देश पर मर मिटने वाले ऐसे साहसी, वीर, क्रांतिकारी का नाम आज भी इतिहास के पन्नों में अंकित है, जिसने मात्र सत्रह वर्ष की आयु में अपने देश के लिए फाँसी के फंदे को हँसते-हँसते चूम लिया।

साहब कुँवरि का साहस

सिखों की सेना को जिसने दी नई पहचान,,
याद रहेगा सदियों तक "कुँवरि" तेरा नाम॥

बात उस समय की है जब पंजाब की रियासत के राजा साहब सिंह थे। राज-काज के मामलों से वे बिलकुल अनजान थे। लेकिन उनकी एक बहन भी थी, जिसका नाम साहब कुँवरि था। साहब कुँवरि अपने भाई से बिलकुल विपरीत थी। तीर, तलवार, घुड़सवारी में वह बड़ी निपुण मानी जाती थी। वह सुयोग्य, चतुर तथा साहसी युवती थी।

अपने भाई को राज-कार्य में अयोग्य जानते हुए उन्होंने पटियाला में रहते हुए भी अपने भाई का राज-काज सँभाल रखा था। कुँवरि के अच्छे प्रबंध से ही राज-काज की स्थिति काफी सुधर चुकी थी तथा राज्य की उन्नति भी दिनोंदिन हो रही थी, जिससे प्रजा भी सुखी थी।

साहब कुँवरि का विवाह पटियाला के कुँवर जयमल सिंह से हुआ था। जयमल सिंह बहुत ही नेकदिल, साहसी और वीर पुरुष थे। साहब कुँवरि की वे बहुत इज्जत करते थे।

विवाह के कुछ समय बाद फतेहगढ़ के राजा ने पंजाब पर चढ़ाई कर दी और सेना को हराकर राजा साहब सिंह को गिरफ्तार कर लिया। रिश्ते में फतेहगढ़ का राजा जयमल सिंह का चचेरा भाई था।

जब यह बात साहब कुँवरि को पता चली तो उसका पारा सातवें आसमान पर चढ़ गया। अपने कुछ जाँबाज सिपाहियों को लेकर वह फतेहगढ़ आ धमकी और राजा को ललकारने लगी। फतेहगढ़ की विशाल सेना के कुँवरि ने होश उड़ा दिए। अपने जाँबाज सिपाहियों के साथ कुँवरि बड़े साहस और बहादुरी से लड़ी, जिसका परिणाम यह हुआ कि कुँवरि की युद्ध में विजय हुई और वह अपने भाई को छुड़ाकर ले गई।

उस समय मराठों का बड़ा दबदबा था। अपनी शक्ति बढ़ाने के लिए मराठे अनेक रियासतों को अपने में मिला चुके थे। जब मराठों को पता चला कि पटियाला की रियासत का प्रबंध कार्य एक स्त्री देख रही है तो उन्होंने पंजाब रियासत पर चढ़ाई कर दी। जब साहब कुँवरि को मराठों की नियति का आभास हुआ तो उसने अपने सिख सरदार सैनिकों को एकत्रित कर युद्ध के मैदान में उतार दिया।

उस समय मराठों की सेना युद्धकौशल में निपुण थी। इसके विपरीत सिख सेना न तो युद्ध कौशल में निपुण थी और न ही उसके पास लड़ने के आधुनिक हथियार थे। इसलिए मराठों की विशाल सेना के सामने सिख सैनिकों का ठहरना मुश्किल था।

अतः कुछ समय बाद ही सिख सेना के हौसले पस्त होने लगे। सैनिक घबराने लगे, उनका साहस और शौर्य छिन्न-भिन्न होने लगा।

जब इस बात का पता साहब कुँवरि को चला तो वह अपने हाथ में नंगी तलवार लेकर युद्ध के मैदान में कूद पड़ी और अपनी सिख सेना का

नेतृत्व करते हुए बोली, "मेरे जाँबाज सिख सरदारो! आज इस रियासत को तुम्हारी जरूरत है, तुम्हें अपनी कौम के मान के साथ-साथ अपनी धरती का भी मान रखना है। इतिहास गवाह है कि आज तक युद्ध के मैदान में सिख सरदार ने कभी पीठ नहीं दिखाई। हमेशा दुश्मन का वार अपने सीने पर झेला है। दुश्मन को बता दो कि आज भी तुम्हारे बाजुओं में वही ताकत, वही हिम्मत और वही जज्बा मौजूद है। मेरे जाँबाज जवानों,

आगे बढ़ो और दुश्मन का सफाया कर दो।"

अजब शक्ति थी कुँवरि के शब्दों में। सिख सैनिकों की तलवारें म्यान से बाहर निकलने लगीं, दुश्मनों को ऐसे काटने लगीं जैसे न जाने कब से खून की प्यासी हों।

युद्ध के मैदान में समय-समय पर साहब कुँवरि सिख सेना का हौसला बढ़ाती और कहती, "मेरे सिख जवानो! आज तुम्हारी बहादुरी और साहस का इम्तिहान है। इन मराठों को बता दो कि सिख सरदार भी किसी से कम नहीं हैं। यदि मरना ही है तो युद्धवीरों की तरह मरो। मैं वादा करती हूँ कि जब तक मेरे तन में खून की एक भी बूँद है, तब तक मैं लड़ती रहूँगी। तुम्हारे राजा की बहन होने के नाते मैं भी तुम्हारी बहन हूँ। आओ, आगे बढ़कर अपनी बहन का साथ दो।"

साहब कुँवरि के उत्तेजना तथा ओजपूर्ण शब्दों को सुनकर सिख सरदारों ने प्रतिज्ञा की कि वे मर जाएँगे, लेकिन युद्ध में पीठ नहीं दिखाएँगे।

काफी समय तक युद्ध चलता रहा। सिख सरदारों के सैकड़ों सिपाही शहीद हो गए, लेकिन साहब कुँवरि की बहादुरी और साहस के आगे मराठा सेना को झुकना पड़ा। अंत में मराठा सैनिक घबराकर युद्ध के मैदान से भाग खड़े हुए।

युद्ध के बाद साहब कुँवरि अपनी रियासत पटियाला चली गई। लेकिन कुछ चापलूस दरबारियों ने साहब कुँवरि के खिलाफ राजा साहब

को भड़काना शुरू कर दिया। जिसका परिणाम यह हुआ कि राजा साहब कुँवरि के सारे अहसान भूलकर उनसे नाराज रहने लगे।

धीरे-धीरे समय व्यतीत होने लगा। राजा साहब पर चापलूसों की पकड़ बढ़ती गई, जिसके कारण राजा साहब ने कुँवरि को धोखे से पटियाला बुलाया और गिरफ्तार कर एक किले में डाल दिया।

साहब कुँवरि को इस बात का बहुत दुख हुआ। उसने मन-ही-मन अपने भाई से सभी रिश्ते तोड़ लिये और एक दिन नौकर का वेश बनाकर किले से बाहर निकल आईं। न तो उन्होंने अपने भाई से कोई शिकायत की और न ही उससे कोई रिश्ता रखा। जब तक साहब कुँवरि जीवित रहीं, अपनी रियासत का कामकाज भली-भाँति देखती रहीं। अंत में उन्होंने अपने प्राण त्याग दिए।

साहब कुँवरि की मृत्यु का समाचार मिलते ही पटियाला रियासत में शोक की लहर दौड़ गई। राजा साहब सिंह को भी अपनी बहन की मृत्यु का बहुत दुख हुआ, परंतु राजा साहब सिंह अब पछताने के अलावा कुछ भी नहीं कर सकते थे।

इतिहास में आज भी वीरांगना, साहसी साहब कुँवरि का नाम बड़े सम्मान के साथ लिया जाता है। जिसने युद्ध में कुछ जाँबाज सिपाहियों के साथ मराठों की विशाल सेना के दाँत खट्टे कर दिए थे।

सिंधु देश की रानी

पति–पुत्र के दुख को जिसने कर दिया एक किनारा,
ले नंगी तलवार हाथ में इक–इक दुश्मन मारा।

अपना देश, अपना वतन किसे प्यारा नहीं होता। हर व्यक्ति का कर्तव्य होना चाहिए कि अपने देश के लिए तन–मन–धन से समर्पित हो। जब भी देश पर कोई विपदा आए तो हर व्यक्ति उसका सामना करने के लिए हमेशा तैयार रहे। ऐसे समय में अपना साहस और शौर्य दिखाने में पीछे न रहे।

ऐसी ही एक कहानी सिंधु देश की रानी की है। जिसने अपने प्राणों की परवाह किए बिना अपने देश के मान की रक्षा की और अपना नाम इतिहास के पन्नों में अमर कर गई।

बात उस समय की है, जब सिंधु देश पर राजा दाहिर राज्य करते थे। अचानक मुगलों ने उनके राज्य पर आक्रमण कर दिया, किंतु राजा दाहिर तनिक भी विचलित नहीं हुए और उन्होंने अपने बड़े पुत्र को मुगलों की सेना से लड़ने के लिए भेज दिया।

सिंधु कुमार ने बड़ी वीरता और साहस का परिचय देते हुए मुगलों की सेना को धूल चटानी शुरू कर दी, किंतु मुगलों की सेना बहुत विशाल थी। अतः सिंधु कुमार अधिक समय तक उनसे युद्ध नहीं कर सके और

शहीद हो गए।

मुगलों की सेना ने सिंधु कुमार को परास्त कर राजधानी में प्रवेश कर लिया।

जैसे ही सिंधु नरेश दाहिर को यह समाचार मिला तो उन्हें बहुत दुख हुआ। लेकिन अपने दुख की परवाह किए बिना ही वे अपनी सेना लेकर युद्ध के मैदान में निकल पड़े।

दोनों सेनाओं में घमासान युद्ध हुआ। मुगलों की विशाल सेना के कारण राजा दाहिर भी अधिक समय तक युद्ध में न टिक सके। उनका हाथी बुरी तरह से घायल हो चुका था और युद्ध का मैदान छोड़कर भाग रहा था।

सिंधु नरेश के हाथी को युद्ध से भागते देख उनकी सेना भयभीत होने लगी। सेना का उत्साह इस प्रकार बिखरा हुआ देखकर राजा चिंतित होने लगे। वे समझ नहीं पा रहे थे कि ऐसी स्थिति में उन्हें क्या करना चाहिए।

लेकिन सिंधु नरेश अपनी साहस और वीरता का परिचय देते हुए घोड़े पर बैठकर युद्ध करने लगे। उन्हें पुनः दुश्मनों से युद्ध करते हुए देखकर उनकी सेना का मनोबल लौट आया और सेना एक बार फिर मुगलों के दाँत खट्टे करने लगी।

अंत में विजय मुगलों की ही हुई, क्योंकि इतनी विशाल सेना का सामना करना सिंधु सैनिकों के वश की बात नहीं थी। युद्ध में सिंधु नरेश वीरगति को प्राप्त हो गए। मुगल सैनिकों ने राजधानी को चारों ओर से घेर लिया था।

अब राजमहल में चंद जाँबाज सैनिक ही बचे हुए थे। उनमें भी मुगलों की विशाल सेना की दहशत व्याप्त थी, लेकिन तभी रानी ने हाथ में तलवार लेकर एक सिंहनी की तरह हुंकार भरी। अपनी रानी का ऐसा विकराल रूप आज तक किसी ने नहीं देखा था। एक पल के लिए सभी की आँखें फटी की फटी रह गईं। रानी ने हाथ में तलवार लेकर गरजकर कहा, "हे सिंधु घाटी के जाँबाज राजपूतों! आज तुम्हारे साहस और शौर्य की परीक्षा का समय है। इस समय दुश्मन हमारे घर में घुसकर हमारे सम्मान को ललकार रहा है। मुझे याद दिलाने की जरूरत नहीं कि एक राजपूत का क्या कर्तव्य होता है। आओ, आज हम दिखा दें कि जब एक राजपूत की तलवार म्यान से बाहर आती है तो वह कितनी प्यासी होती है। निकाल फेंकों इन मुगलों को अपने घरों से बाहर, तुम्हें अपने देश पर मर मिटने का इससे अच्छा अवसर कभी नहीं मिलेगा।"

रानी के इन शब्दों ने क्षत्रियों के मन का भय निकाल दिया और उनमें साहस व क्रांति की ऐसी ज्वाला दहका दी कि मानो पल भर में ही मुगलों की सेना का सफाया कर देंगे।

सिंधु घाटी के जाँबाज सैनिक अपने हाथों में नंगी तलवार लेकर मुगलों पर ऐसे टूटे जैसे कई दिनों के भूखे शेर शिकार पर टूटते हैं। मुगलों को गाजर-मूली की तरह काटते हुए सैनिक आगे बढ़ते जा रहे थे। मुहम्मद बिन कासिम, जो कि मुगलों की सेना का नेतृत्व कर रहा था, वह भी सोच में पड़ गया कि आखिर इन चंद सैनिकों में इतना जोश आया कहाँ से।

क्षत्रियों की वीरता और साहस को देखकर मुगलों की सेना के पैर उखड़ गए। वे राजधानी से भाग जाना चाहते थे, लेकिन जैसे ही उन्होंने भागने के लिए अपने कदम बढ़ाए तो सामने रानी और क्षत्राणियों की सेना देखकर मुहम्मद बिन कासिम की साँस अटककर रह गई। आगे खाई पीछे कुआँ वाली कहावत चरितार्थ देखकर कासिम को कुछ नहीं सूझ रहा था कि वह पीछे जाए या आगे। अभी वह कुछ सोच पाता, इससे पहले ही रानी ने अपनी क्षत्राणी सेना के साथ मुगलों पर धावा बोल दिया।

मुगल सेना अब दोनों ओर से घिर चुकी थी। सिंधु रानी की तलवार मुगल सैनिकों को गाजर-मूली की तरह काट रही थी। दूर-दूर तक कटे हुए शवों के ढेर दिखाई पड़ रहे थे। कासिम ने अपने जीवन में ऐसी लड़ाई आज तक नहीं लड़ी थी, जिसमें एक स्त्री अपनी वीरता और साहस के बल पर सैकड़ों सैनिकों का संहार कर रही हो।

अवसर पाते ही कासिम अपने कुछ सैनिकों को लेकर युद्ध के मैदान से भाग खड़ा हुआ। इस पर भी रानी को संतोष नहीं हुआ, वह अपने हाथ में नंगी तलवार लहराती हुई घोड़े पर बैठी दुश्मनों के पीछे दौड़ पड़ी। रानी की आँखों में खून सवार था। वह एक भी मुगल को जिंदा वापस नहीं जाने देना चाहती थी।

लेकिन कासिम वहाँ से बचकर भाग निकला। इस युद्ध में मुगलों की सेना के हजारों सैनिक मारे गए तथा अनेक सैनिकों को बंदी बना लिया गया। इस युद्ध में पति और पुत्र को खोने के बाद भी रानी का ऐसा साहस

देखते हुए सिंधु रानी की जय-जयकार के नारे गूँजने लगे। अब शायद ही कभी कोई मुगल सेना उनके राज्य की ओर आँख उठाकर देखेगी।

ऐसी थी वीर सिंहनी सिंधु की रानी, जिसने बड़े-से-बड़े दुख को भी किनारे कर अपने देश की रक्षा की तथा अपना नाम इतिहास के सुनहरे पन्नों पर लिखवा दिया।

साहसी नूर इनायत खाँ

देश की खातिर जिसने कतरा-कतरा खून बहाया,
कभी न हारी गैरों से, पर अपनों से धोखा खाया।

इतिहास के सुनहरे पन्नों पर आज भी टीपू सुलतान का नाम अपनी अलग पहचान बनाए हुए है। टीपू सुलतान की वंशज थी नूर इनायत खाँ। हमेशा सतर्क रहनेवाली और साहसी युवती नूर इनायत खाँ उन दिनों नाजियों की नीतियों के खिलाफ लड़ रही थी। उस समय नाजी सैनिकों के अत्याचारों ने चारों ओर कोहराम मचाया हुआ था। विद्रोह करने से पहले ही नाजिया सरकार विद्रोहियों को कुचल देती थी।

नूर इनायत खाँ ब्रिटिश सरकार का साथ देना चाहती थी, क्योंकि उस समय ब्रिटिश हुकूमत ही नाजिया के सामने डटकर खड़ी रह सकती थी।

उस समय जर्मन तथा फ्रांस को भी एक साहसी और कुशल गुप्तचर की जरूरत थी। अतः नूर इनायत खाँ को शीघ्र ही कुछ गुप्तचरों की टीम के साथ फ्रांस भेज दिया गया।

नूर इनायत खाँ को फ्रांस में काम करना अधिक कठिन नहीं लगा, क्योंकि वह फ्रांसीसी और जर्मन भाषा अच्छी तरह जानती थी। फ्रांस में रहकर उसने जर्मन गेस्टापो की गतिविधियों तथा जर्मन के विरुद्ध फ्रांस में अंदर-ही-अंदर पनप रहे विद्रोह की पूरी रिपोर्ट ट्रांसमीटर पर लंदन भेज दी।

इस प्रयास में उसे दो बार गिरफ्तार भी किया गया, लेकिन अपने साहस और कार्यकुशलता के बल पर वह हर बार बच निकलने में कामयाब रही।

एक दिन जब नूर इनायत खाँ किसी से मिलने जा रही थी, तभी कुछ जर्मन गेस्टापो उसके पीछे पड़ गए। कुछ दूर जाने पर उसे गेस्टापों द्वारा पीछा करने का आभास हो गया। फिर क्या था, नूर चीते की तरह चौकन्नी हो गई।

कुछ कदम चलने के बाद नूर ने अपने हाथ में रिवॉल्वर थाम लिया और किसी चालाक चीते की भाँति पलटी।

धाँय... धाँय... धाँय...। उसके रिवॉल्वर से अचानक कई गोलियाँ दनादन बाहर निकलीं और पल भर में ही चार गेस्टापो मारे गए तथा तीन घायल हो गए।

अब नूर को भागने का मौका मिल गया था। वह भागती हुई एक घर के अंदर दाखिल हो चुकी थी।

"कौन?"

"मैं नूर, तुम्हारी मैडेलीन, जल्दी दरवाजा खोलो!" नूर ने हाँफते हुए कहा।

मैडेलीन का नाम सुनते ही सहेली ने तुरंत दरवाजा खोलकर उसे अंदर बुला लिया। नूर फ्रांसीसी देशभक्तों के बीच इसी नाम से जानी जाती थी।

"लेकिन तुम इतनी घबरा क्यों रही हो?" सहेली ने पूछा।

"जर्मन गेस्टापो मेरा पीछा कर रहे हैं। मैंने अभी कुछ गेस्टापों को मौत के घाट उतार दिया है। वे कभी भी यहाँ आ सकते हैं।"

"नूर! तुम मेरी सबसे अच्छी सहेली हो। मैं चाहती हूँ कि तुम यहाँ से लंदन चली जाओ, क्योंकि यहाँ जर्मन गुप्तचरों का जाल काफी विशाल हो गया है। तुम्हारा अब यहाँ रहना खतरे से खाली नहीं है। कभी भी पकड़ी जा सकती हो। आखिर कब तक बच सकोगी?"

"मैं इस प्रकार कायरों की तरह भागना नहीं चाहती, अब मैं जर्मनी जाना चाहती हूँ।" कहते हुए नूर दूसरे कमरे में चली गई।

नूर की सहेली जानती थी कि नूर को उसके मकसद से डिगाना उसके वश की बात नहीं है। अतः उसने बात पलटते हुए पूछा, "तुम नाजियों से इतनी घृणा क्यों करती हो?"

सहेली के इस प्रश्न को सुनकर नूर अतीत में चली गई और बोली, "मैंने तथा मेरे भाई ने नाजियों के विरुद्ध उसी समय युद्ध में शामिल होने का निर्णय कर लिया था जब जर्मनी के नाजी सैनिकों द्वारा फ्रांस पर अधिकार कर लिया गया था। उसके बाद मैं अपने परिवार के साथ इंग्लैंड चली गई थी। फ्रांस के आत्मसमर्पण करने के बाद नाजी फासिस्टों ने जिस बर्बरता का परिचय दिया, उससे मेरे मन में उनके प्रति घृणा उत्पन्न हो गई। दरअसल, मेरा युद्ध अंग्रेजों की ओर से नाजियों के विरुद्ध है। मैं इनसानियत की ओर से बर्बरता के विरुद्ध लड़ रही हूँ।"

इतना कहकर नूर कमरे के अंदर चली गई और जब बाहर आई तो

एक बार उसकी सहेली भी उसे पहचानने में धोखा खा गई।

लेकिन यह क्या, नूर जैसे ही कमरे से बाहर निकली, जर्मन गेस्टापो ने उसे गिरफ्तार कर लिया।

नूर को समझते देर न लगी कि यह सारा किया-धरा उसकी सहेली
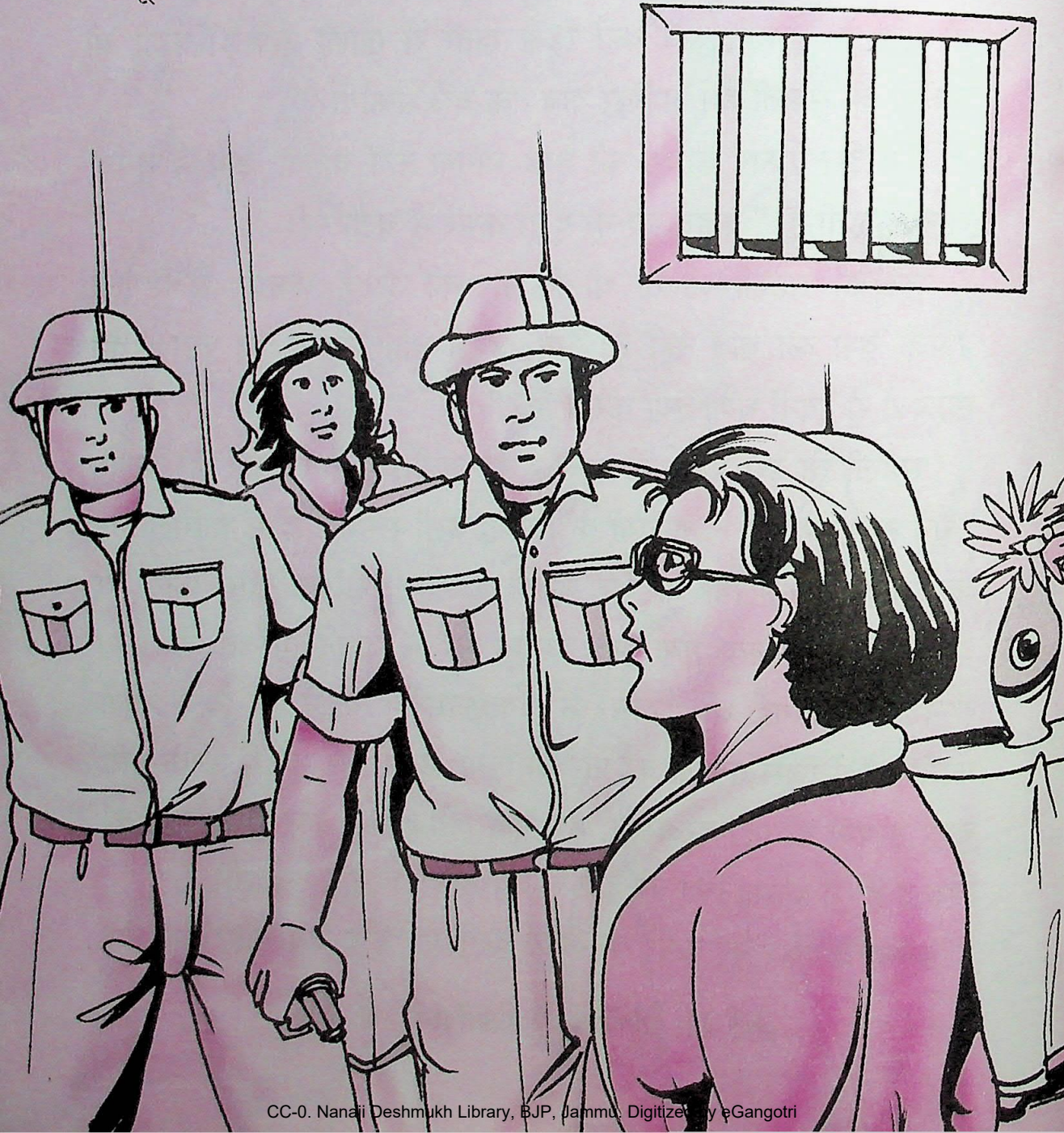
का था, जिसके यहाँ उसने शरण ली थी। मोटे इनाम के लालच में उसकी सहेली ने उसे जर्मन गेस्टापो को सौंप दिया। हमेशा ही सतर्क रहनेवाली नूर इनायत आज अपनी सहेली के हाथों छली गई थी।

जर्मन गेस्टापो नूर को पकड़कर ले गए। उसे मोटी-मोटी जंजीरों में बाँधकर काल कोठरी में डाल दिया गया। गरम सलाखें उसके नंगे बदन पर लगाई गईं उसकी आँखों में मिर्ची का पाउडर डाला गया, लेकिन नूर इनायत जर्मन गेस्टापो के सामने तनिक भी नहीं पिघली। उसने अपने साथियों का पता बताने से साफ इनकार कर दिया।

एक जर्मन अधिकारी ने कड़ककर पूछा, "यदि तुम अब भी अपने साथियों का पता बता दो तो हम तुम्हें छोड़ सकते हैं।"

नूर बोली, "जान दे सकती हूँ, लेकिन पता नहीं बता सकती।"

नूर के शब्द सुनकर जर्मन अधिकारी अपना आपा खो बैठा और रिवॉल्वर की सारी गोलियाँ नूर के सीने में उतार दीं।

और धाँय… धाँय… धाँय… की आवाज के साथ एक साहसी, देशप्रेमी वीरांगना हमेशा-हमेशा के लिए शहीद हो गई। ऐसी साहसी वीरांगनाओं को हिंदुस्तान हमेशा याद रखेगा।
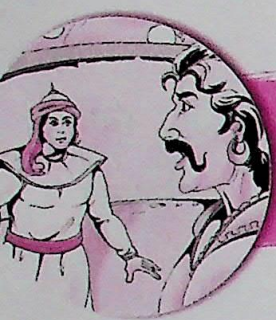
साहसी देशभक्त

साहसी, वीर, बलशाली वीरभद्र था नाम,
देशभक्ति का दे संदेश आया देश के काम।

यह कहानी उस महान् योद्धा तथा साहसी शूरवीर की है, जिसने अपने प्राणों का मोह किए बिना अपने देश की खातिर हँसते-हँसते अपने प्राणों का बलिदान कर दिया।

बात उस समय की है जब भद्र देश का राजा मणिभद्र था। मणिभद्र न्यायप्रिय, वीर, बुद्धिमान तथा साहसी राजा थे। आस-पास के राज्यों में उनके व्यक्तित्व जैसा प्रभावी कोई भी नहीं था।

एक दिन मध्यरात्रि के समय उनके सेनापति चंद्रकांत ने उनसे मिलने की इच्छा प्रकट की और बोला, "क्षमा करें अन्नदाता! मैंने आपको अर्धरात्रि में कष्ट दिया, परंतु मैं भी विवश था। आपसे भेंट करना बहुत ही आवश्यक हो गया था।"

"कहो सेनापति! ऐसी कौन सी बात है, जिसे कहने के लिए तुम भोर होने की भी प्रतीक्षा नहीं कर पाए?" राजा नम्रतापूर्वक बोले।

"महाराज! मुझे अभी-अभी गुप्तचरों से खबर मिली है कि हमारा पड़ोसी देश केवल्य हम पर शीघ्र ही आक्रमण करनेवाला है। इसलिए आपको तुरंत सूचना देना मैंने अपना कर्तव्य समझा। कष्ट के लिए क्षमाप्रार्थी हूँ।"

“नहीं-नहीं सेनापति, कष्ट कैसा। तुमने तो राज्य के प्रति अपने कर्तव्य का पालन किया है। जाओ और जाकर तुम भी युद्ध की तैयारी करो।” महाराज ने कहा।

“जो आज्ञा महाराज!” कहकर सेनापति चंद्रकांत वहाँ से चला गया।

राजा की आज्ञा पाकर सेनापति चंद्रकांत ने अपने वीर, जाँबाज सैनिकों को एकत्रित कर युद्ध की तैयारी प्रारंभ कर दी।

गुप्तचरों का अनुमान बिलकुल सही निकला। तीन दिन के बाद ही केवल्य देश के राजा शक्तिसेन ने भद्र देश पर आक्रमण कर दिया। उधर भद्र देश की सेनाएँ भी युद्ध के लिए तैयार थीं। अतः दोनों राज्यों की सेना युद्ध के मैदान में आमने-सामने आ गईं और देखते-ही-देखते युद्ध छिड़ गया। दोनों ओर की सेनाओं में घमासान युद्ध छिड़ा हुआ था। दोनों राज्यों के अनेक सैनिक घायल हो चुके थे तथा सैकड़ों सैनिक मौत की नींद सो गए थे।

सूरज ढलते ही दोनों ओर की सेनाओं ने युद्ध को विराम दे दिया। सभी सैनिक अपने-अपने तंबुओं में लौट गए।

राजा मणिभद्र की सेना में एक महान् वीर साहसी योद्धा था, जिसका नाम वीरभद्र था। वीरभद्र के पिता भी एक समय राजा मणिभद्र की सेना में थे तथा अपने राज्य के लिए युद्ध में शहीद हो गए थे।

वीरभद्र दिन के युद्ध में अपने जौहर दिखाता और रात को प्रहरी का काम करता था। अपने राज्य के प्रति वह पूरी तरह ईमानदार और

कर्तव्यनिष्ठ था। उसकी यही अंतिम इच्छा थी कि अपने देश के लिए वह भी अपने पिता की तरह अपने प्राणों को बलिदान कर दे। घर में उसके एक बूढ़ी माँ के सिवाय कोई नहीं था।

पूर्णिमा की रात थी। दिन भर घमासान युद्ध के चलते दोनों ओर के सैकड़ों सैनिक वीरगति को प्राप्त हो चुके थे। संध्या के समय शंखनाद के साथ ही युद्ध बंद हो गया था।

सुबह के लगभग चार बजे होंगे। उस समय सेना का अधिकारी शूरसेन गश्त लगाने निकला हुआ था। वह हर चौकी पर घूम-घूमकर देख रहा था कि रक्षक और प्रहरी अपना उत्तरदायित्व निभा रहे हैं कि नहीं।

तभी अचानक शूरसेन सेनापति के शिविर के आगे ठिठककर रुक गया। अंदर सेनापति चंद्रकांत सोए हुए थे तथा बाहर प्रहरी सो रहा था।

शूरसेन ने उस प्रहरी को एक जोरदार लात लगा दी। प्रहरी चौंककर उठ खड़ा हुआ।

"तुम क्यों सो रहे थे? क्या नाम है तुम्हारा?" शूरसेन ने कड़कती आवाज में कहा।

"मेरा नाम वीरभद्र है।" शांत स्वर में वीरभद्र बोला।

"तुम प्रहरी होते हुए अपना कर्तव्य भूल गए। रक्षा करने के स्थान पर तुम सो रहे हो। तुम्हें अपने उत्तरदायित्व का जरा भी ध्यान नहीं है। इस अपराध की तुम्हें अवश्य ही सजा दी जाएगी। सैनिको! इसे बंदी बनाकर महाराज के कक्ष में लेकर आओ। इसका निर्णय वहीं होगा।" शूरसेन

कहकर आगे बढ़ गया।

कुछ समय बाद ही वीरभद्र को महाराज के समक्ष प्रस्तुत किया गया तथा वीरभद्र की सारी घटना बताते हुए बोले, "महाराज! युद्ध क्षेत्र में किसी प्रहरी का सोना अत्यंत दंडनीय अपराध है। अतः इसे कड़े से कड़ा दंड दिया जाए।"

"वीरभद्र! तुम्हीं बताओ, तुम्हारे इस अपराध के लिए तुम्हें क्या दंड मिलना चाहिए?" महाराज बोले।

"मृत्युदंड महाराज!" वीरभद्र ने बड़े संयम से उत्तर दिया।

"क्या तुम्हें मृत्यु से बिलकुल भय नहीं लगता?"

"नहीं महाराज!" वीरभद्र निडर होकर बोला, "जिसने जन्म लिया है, उसे एक न एक दिन तो मरना ही है, फिर डर कैसा? बस अफसोस इतना अवश्य रहेगा कि यदि मेरी मृत्यु युद्धक्षेत्र में लड़ते-लड़ते होती तो मेरी विधवा माँ को मुझ पर गर्व होता और पिता की आत्मा को शांति मिलती।"

महाराज बोले, "ठीक है, हम तुम्हें मृत्युदंड अवश्य देंगे, लेकिन पहले इतना अवश्य जानना चाहेंगे कि सच्चाई क्या है?"

"महाराज! जब आपने मृत्युदंड दे ही दिया तो फिर सच और झूठ से क्या फर्क पड़ता है। आप व्यर्थ में ही अपना समय नष्ट कर रहे हैं।"

वीरभद्र की बातें सुनकर राजा ने उससे सच्चाई बताने का आदेश दिया। तब वीरभद्र बोला, "महाराज! कल युद्ध में घायल होकर वीर

सैनिक चतुरसेन गिर पड़ा था। मैं पूरी रात उसकी सेवा में जागता रहा। भोर होते ही उसके प्राण निकल गए और शंखनाद सुनकर मैं युद्ध में लड़ने चला गया। दिन भर युद्ध करने के पश्चात् थक गया था। इसलिए कब मेरी आँख लग गई, पता ही नहीं चला। बस मेरा यही अपराध है, महाराज।"

वीरभद्र की सच्चाई और साहस की बात सुनकर राजा ने उसे मृत्युदंड से मुक्त कर दिया और कहा, "वीरभद्र! तुम वीर योद्धा और साहसी युवक हो। अतः आज से तुम युद्ध के मैदान में अपने जौहर दिखलाओगे।"

उसके बाद वीरभद्र ने युद्ध के मैदान में जाकर दुश्मनों को अपनी वीरता एवं साहस का लोहा मनवाया और लड़ते-लड़ते वीरगति को प्राप्त हो गया।
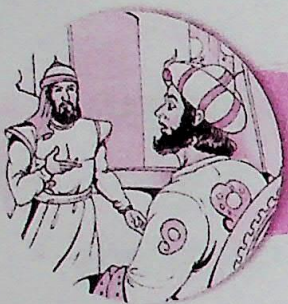
साहसी ताजकुमारी

साहस और शौर्य की देवी थी वह ताजकुमारी,
विवश थी जिसके आगे मुगलों की सेना सारी।

बच्चे थे कि आफत के परकाले। सिपाहियों को अपनी तलवार से गाजर-मूली की तरह काटकर रख दिया। जो बच गए, उन्होंने भागकर अपनी जान बचाई।

ये बालक कोई और नहीं, राजा सज्जन सिंह के वीर-साहसी पुत्र और पुत्री थे, जिनकी उम्र मात्र 14-15 वर्ष की रही होगी।

दो मुगल सैनिक बेतहाशा अपनी जान बचाकर भाग रहे थे। बीच-बीच में मुड़कर देख लेते कि कहीं वे दोनों बालक उनका पीछा तो नहीं कर रहे। उन सिपाहियों ने अनेक लड़ाइयाँ लड़ी थीं, किंतु किसी भी लड़ाई में अपने साथियों की ऐसी दुर्दशा नहीं देखी थी।

दोनों भयभीत सिपाहियों ने अपनी जान बचाकर एक घने जंगल में शरण ली। दोनों अपने घोड़े से उतरे और एक पेड़ की छाँव में सुस्ताने बैठ गए।

पहला सिपाही बोला, "यार! आज तक हमने ऐसे साहसी और लड़ाकू बालक नहीं देखे। देखा था न, हमारे साथियों पर वह बित्ते भर की छोरी कैसी तलवार चला रही थी।"

“और उसका भाई भी तो किसी तूफान से कम तलवारबाजी नहीं कर रहा था।” दूसरे सिपाही ने हाँफते हुए कहा।

“उस लड़की ने हमारे साथियों को गाजर-मूली की तरह काटकर रख दिया। इसका बदला मैं जरूर लूँगा। यदि मैंने भी उसे बादशाह की दासी न बनवा दिया तो…।” पहला सिपाही गुस्से में लाल होकर बोला।

दूसरे ने उसकी हाँ में हाँ मिलाते हुए कहा, “तू चिंता मत कर। बादशाह के इतने कान भरेंगे कि उन्हें मजबूर कर देंगे, इस बित्ते भर की लौंडी को अपनी नौकरानी बनाकर रखने के लिए। तू देखता जा, चल खड़ा हो, दिल्ली पहुँचना भी है।” कहकर दोनों उठकर अपने-अपने घोड़े पर बैठकर दिल्ली के लिए रवाना हो गए।

उस समय दिल्ली पर कुतुबुद्दीन ऐबक शासन करता था। सुंदर लड़कियाँ उसकी कमजोरी थीं, जिसे सभी जानते थे। अतः उन सिपाहियों को कुतुबुद्दीन ऐबक को भड़काने में अधिक समय नहीं लगा।

“हुजूर! हम पूरे बीस सिपाही और वे दो। हमें दोनों भाई-बहन को किसोरा गाँव के पास घेर लिया, आपकी शान में अपशब्द भी कहे। उस लड़की ने तो आपके लिए बहुत कुछ कह डाला, जिसे हम बयान भी नहीं कर सकते। उस चौदह साल की कमसिन लड़की ने हमारे जाँबाज सिपाहियों को गाजर-मूली की तरह काटकर रख दिया। बस हम दोनों ही किसी तरह अपनी जान बचाकर लौटे हैं।”

“कौन थे ये बालक?” बादशाह ने गरजकर पूछा।
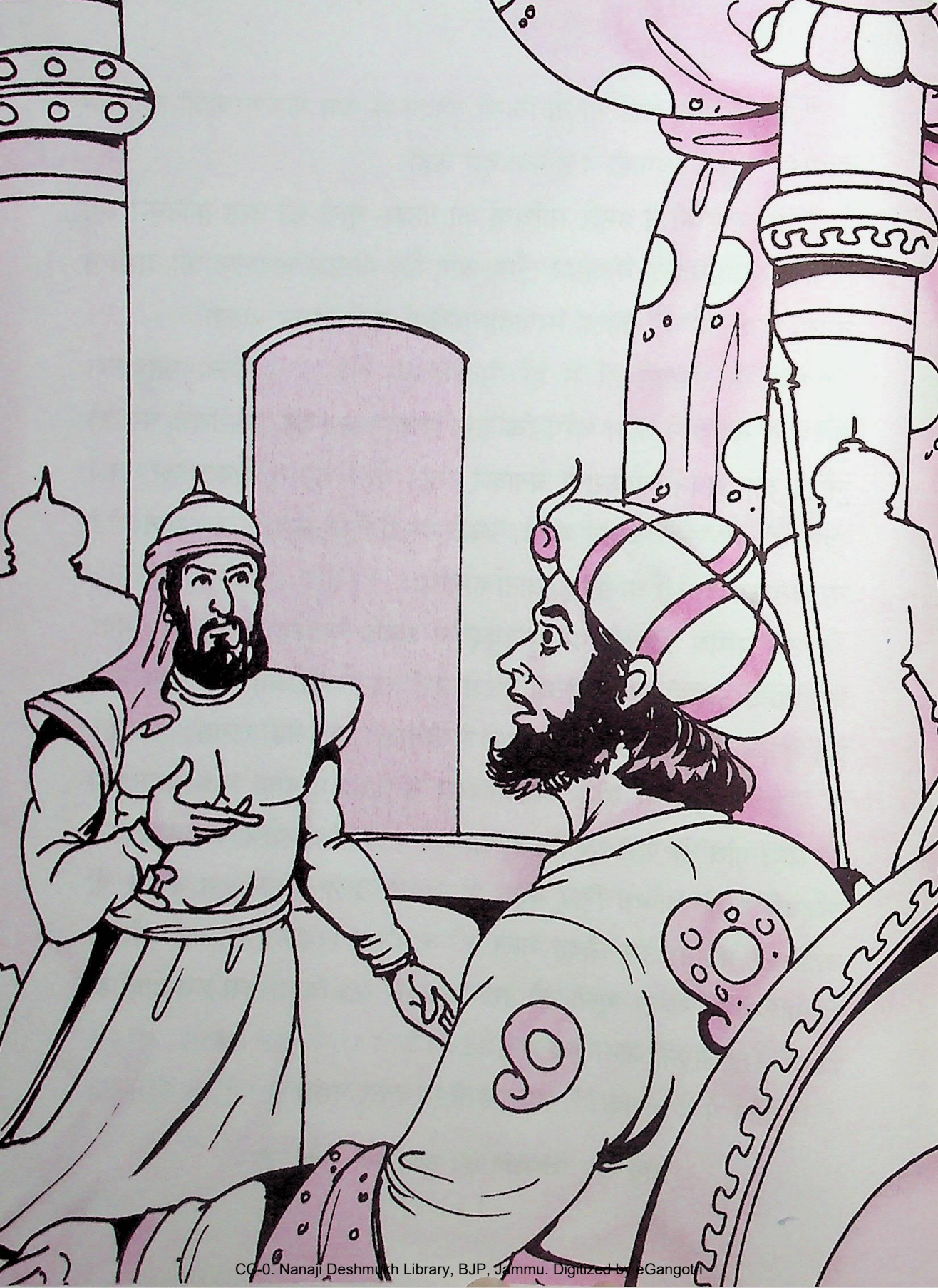
"हुजूर! राजा सज्जन सिंह का लड़का और लड़की थे। दोनों ही बहुत जाँबाज और साहसी हैं। लड़की तो समझो खूबसूरत बला है, उसका नाम ताजकुमारी है हुजूर।"

कुतुबुद्दीन ऐबक का गुस्सा सातवें आसमान पर चढ़ गया। वह बोला, "उनकी इतनी मजाल कि बादशाह की शान में गुस्ताखी करें। लगता है राजा सज्जन सिंह जरूर हमारे खिलाफ कोई साजिश कर रहा है। इससे पहले कि वह अपने नापाक इरादों में कामयाब हो, हम उसे नेस्तनाबूद कर देंगे और उस ताजकुमारी को अपनी दासी बनाकर रखेंगे।"

और अगले दिन पौ फटते ही बादशाह कुतुबुद्दीन की फौज ने किसोरा गाँव की ओर रुख कर लिया।

ताजकुमारी और उसके भाई ने मुगल सैनिकों से हुई लड़ाई की बात राजा सज्जन सिंह को बता दी थी। वह इस लड़ाई का परिणाम भी जान गए थे कि अब कुतुबुद्दीन ऐबक चुप नहीं बैठेगा और हमारी रियासत पर अवश्य ही चढ़ाई कर देगा। अतः राजा सज्जन सिंह युद्ध के लिए पूरी तरह तैयार थे। भले ही उनकी सेना मुगलों की विशाल सेना के आगे कहीं भी नहीं ठहरती थी। फिर भी राजा सज्जन सिंह मुगलों की विशाल सेना से लोहा लेने के लिए तैयार थे।

मुगलों की फौज ने किसोरा गाँव को चारों ओर से घेर लिया था। राजा सज्जन सिंह के पास कुतुबुद्दीन ऐबक ने संदेश भिजवा दिया, "सज्जन सिंह! हमसे मॉफी माँग लो और जुर्माना भरकर अपनी बेटी राजकुमारी

को हमारी सेवा में भेज दो।"

बादशाह का संदेश मिलते ही राजा सोच में पड़ गए। तभी ताजकुमारी बोली, "पिताजी! ऐसा कभी नहीं हो सकता। उस मुगल ने हमारी खुद्दारी को ललकारा है। मैं ऐसा कभी नहीं होने दूँगी कि कोई गैर मर्द मेरे शरीर को स्पर्श भी करे।"

ताजकुमारी का साहस देखकर राजा का सीना चौड़ा हो गया और उन्होंने मुगलों की शर्त नामंजूर करते हुए युद्ध का ऐलान कर दिया।

दोनों ओर से घमासान युद्ध छिड़ गया। अपनी सेना के साथ कुतुबुद्दीन ऐबक भी आया था। युद्ध में उसने ताजकुमारी का साहस और शौर्य देखा तो वह दंग रह गया। उसने ऐलान कर दिया कि जो भी जाँबाज ताजकुमारी को जिंदा पकड़कर लाएगा, उसे ऊँचा ओहदा दिया जाएगा।

फिर क्या था, मुगलों की सेना ने ताजकुमारी और उसके भाई को चारों ओर से घेर लिया, लेकिन ताजकुमारी की तलवारबाजी ने मुगलों की फौज के दाँत खट्टे कर दिए। सिंहनी की तरह गरजती हुई हाथ में नंगी तलवार लेकर ताजकुमारी मुगलों की फौज का सफाया कर रही थी कि तभी एक मोटी रस्सी का फंदा उसके गले में आकर पड़ा। उस रस्सी के फंदे को पकड़े हुए ही उसने कई सैनिकों को मौत के घाट उतार दिया।

गले में रस्सी का फंदा पड़ने से उसकी हिम्मत टूटने लगी थी, वह तलवार भी नहीं चला पा रही थी। अतः उसने अपने भाई से कहा, "भैया!

क्या तुम चाहते हो कि तुम्हारी बहन इन मुगलों के हाथों बेइज्जत हो। मैं इनके हाथों अपनी इज्जत नहीं गँवा सकती। तुम तुरंत मेरा सिर धड़ से अलग कर दो।"

ताजकुमारी के इन शब्दों को सुनकर पहले तो राजकुमार का दिल दहल उठा, फिर हिम्मत जुटाकर उसने तलवार के एक ही वार से ताजकुमारी का सिर धड़ से अलग कर दिया। तभी अचानक किसी सैनिक ने राजकुमार की पीठ में तलवार भोंक दी।

दोनों भाई-बहन हजारों मुगलों को मौत के घाट उतारकर अपने साहस और वीरता का परिचय देते हुए युद्धभूमि में सदा के लिए सो गए। कुतुबुद्दीन ऐबक को जीवन भर पछतावा रहा कि वह ताजकुमारी को जीवित नहीं पकड़ सका।

साहसी पद्मिनी

पुरुष वेश धर जिसने अपना शौर्य साहस दिखलाया,
भाई और पति को सेना में ऊँचा ओहदा दिलवाया।

(ग्वालियर का मराठा सैनिक शिविर, जहाँ पर दो टुकड़ियों के नायक आपस में बातें कर रहे हैं, जिसमें एक का नाम पद्मसिंह तथा दूसरे का नाम रामसिंह है।)

"पद्मसिंह! तुम्हारी मूँछें क्यों नहीं हैं, जबकि एक पुरुष की मूँछें ही उसकी पहचान होती है।"

"क्यों, बिना मूँछों के पुरुष पुरुष नहीं होता?"

"नहीं यार पद्मसिंह! मेरा मतलब यह नहीं था, मैं तो बस यह कहना चाहता था कि मूँछें सैनिकों की शान होती हैं।" रामसिंह ने फिर चुटकी लेते हुए कहा।

"मूँछ रखने से कोई शूरवीर नहीं होता। वीरता मनुष्य में जन्म से ही होती है।" कहता हुआ पद्मसिंह दूसरी ओर चला गया।

रामसिंह की गिनती बहुत चतुर और बुद्धिमान सैनिकों में की जाती थी। उसकी बुद्धिमानी और चतुराई के बल पर ही उसको सेना में टुकड़ी का नायक बनाया गया था।

रामसिंह अब भी पद्मसिंह का बिना मूँछों वाला कोमल चेहरा देखता

तो उसके मन में बस एक ही खयाल आता कि कहीं वह किसी राज्य की गुप्तचर स्त्री तो नहीं, जो पुरुष का वेष धरकर मराठा सेना में शामिल हो गई है, क्योंकि उस समय मराठा सेना में किसी स्त्री का होना बहुत बड़ा अपराध माना जाता था।

अत: एक दिन पद्मसिंह का पीछा करते-करते रामसिंह नदी के किनारे पहुँच गया। घनी झाड़ियों में छिपकर रामसिंह पद्मसिंह की हरकतों पर नजर रखे हुए था।

अचानक रामसिंह की नजर नदी में नहाते हुए पद्मसिंह पर ठहर गई। पद्मसिंह को नहाते हुए देखकर वह चौंक पड़ा। पद्मसिंह पुरुष नहीं बल्कि स्त्री है। रामसिंह का शक अब यकीन में बदल चुका था।

रामसिंह ने तुरंत सेनापति को जाकर सूचित किया और पद्मसिंह को तत्काल बंदी बनाकर महाराजा दौलतराव सिंधिया के समक्ष प्रस्तुत किया गया।

सेनापति ने कहा, "महाराज! अवश्य ही यह हमारे दुश्मनों का गुप्तचर है। जिसने पुरुष वेश धरकर आपको धोखा देने का प्रयास किया है, जबकि मराठा छावनी में महिलाओं का प्रवेश घोर अपराध है। इसे दंड दिया जाए, महाराज।"

महाराजा के सामने अपनी वास्तविकता को स्वीकार करते हुए वह स्त्री बोली, "महाराज! मुझे क्षमा करें , मैं पद्मसिंह नहीं, पद्मिनी हूँ। अपने भाई का कर्ज उतारने के लिए मुझे इस भेष को धारण करना

पड़ा।" पद्मिनी ने सच्चाई बताते हुए कहा।

महाराज ने पद्मिनी से उसकी पूरी कहानी सुनाने के लिए कहा।

पद्मिनी ने जब अपनी कहानी सुनाई तो सभी दंग रह गए।

भोपाल राज्य के एक गाँव में शिवसिंह नाम का एक किसान रहता था। उसके दो संतानें थीं–एक जोरावरसिंह तथा दूसरी पद्मिनी।

उस समय जोरावरसिंह की अवस्था पंद्रह वर्ष की थी। सारा गाँव महामारी की चपेट में आ गया था, जिसके कारण गाँव के सैकड़ों लोगों की जान चली गई थी। इन्हीं के साथ पद्मिनी के माता-पिता भी चल बसे। उस समय पद्मिनी बहुत छोटी थी, अतः माता-पिता की मृत्यु के पश्चात् पद्मिनी की जिम्मेदारी उसके भाई जोरावरसिंह पर आ गई।

मात्र पंद्रह वर्ष की आयु में ही जोरावर ने घुड़सवारी, तलवारबाजी, तीरंदाजी सभी कुछ सीख लिया था। अतः उसने पद्मिनी को लाड़-प्यार के साथ-साथ घुड़सवारी, तलवारबाजी और तीरंदाजी में भी निपुण बना दिया था। अब दोनों जंगल में शिकार करते और स्वच्छंद घूमते। पद्मिनी अब पंद्रह वर्ष की हो गई थी।

जोरावरसिंह अब विवाह योग्य हो चुका था। अपनी बहन के कहने पर जोरावर ने विवाह कर लिया। इस विवाह में जोरावर पर काफी कर्ज हो चुका था। धीरे-धीरे कर्ज बढ़ता जा रहा था।

जोरावर के पास थोड़ी सी जमीन थी, लेकिन उससे दोनों के घर का खर्च भी पूरा नहीं पड़ता था। जिसके कारण जोरावर कर्ज उतारने में असमर्थ

था और कर्ज था कि पूनम के चाँद की तरह बढ़ता ही जा रहा था।

कर्ज की अवधि बीत जाने पर महाजन ने जोरावर के विरुद्ध मुकदमा दायर कर दिया, जिससे भोपाल दरबार ने उसे बंदी बनाकर कारागार में डाल दिया।

अब पद्मिनी की परेशानी बढ़ने लगी थी। घर में भाभी का रो-रोकर बुरा हाल था। भाई-बंधु इतने धनी नहीं थे कि वे उनका कर्ज उतार देते। अतः पद्मिनी ने अपनी भाभी को सांत्वना देते हुए कहा, "भाभी! चिंता मत करो, मैं एक वर्ष बाद रुपयों का इंतजाम करके लौटूँगी, तब तक तुम घर का खयाल रखना।"

पद्मिनी पुरुष का भेष बनाकर ग्वालियर की ओर चल पड़ी। उन दिनों ग्वालियर के माधवजी सिंधिया 'महाराज शिंदे' के उत्तराधिकारी महाराजा दौलतराव सिंधिया तथा ईस्ट इंडिया कंपनी के बीच में युद्ध चल रहा था।

सिंधिया मराठा शक्ति के बहुत बड़े स्तंभ थे। मराठों की सत्ता के विनाश के लिए मार्किवेस वेलेजली और उसका भाई ड्यूक ऑफ वेलिंगटन, कर्नल आर्थर वेलेसली जी-जान से जुटे थे। अतः सिंधिया छावनी में सैनिकों की भरती युद्धस्तर पर चल रही थी।

क्योंकि पद्मिनी पहले से ही घुड़सवारी, तलवारबाजी तथा तीरंदाजी जानती थी, इसलिए उसकी भरती सेना में तुरंत हो गई। वहाँ उसने अपना नाम पद्मसिंह बताया।
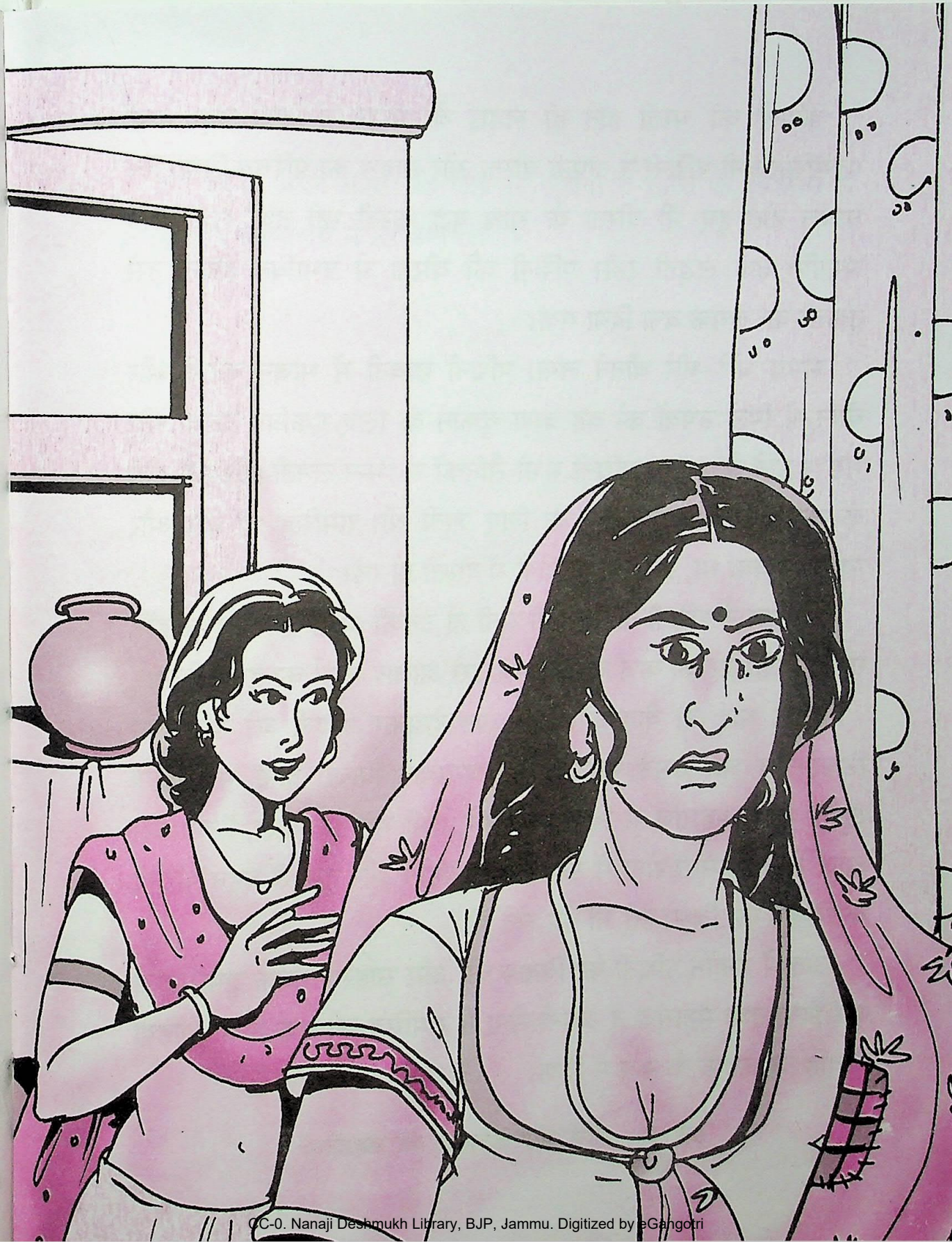
पद्मिनी को भरती होते ही लड़ाई के मैदान में जाना पड़ा। वहाँ पद्मसिंह बनी पद्मिनी ने अपनी वीरता और साहस का परिचय दिया। वह घायल होते हुए भी वीरता के साथ युद्ध करती रही तथा लड़ाई की समाप्ति तक लड़ती रही। पद्मिनी की वीरता से प्रभावित होकर उसे टुकड़ी का नायक बना दिया गया।

समय धीरे-धीरे बीतने लगा। पद्मिनी छावनी में भोजन करती और वेतन में मिले रुपयों को वह ऋण चुकाने के लिए एकत्रित करती थी। मूँछें न होने के कारण पद्मिनी सभी सैनिकों से भिन्न लगती थी। स्त्री होने के कारण वह अलग स्नान के लिए जाती थी। रामसिंह भी वीर और साहसी युवक था, इसी कारण दोनों में दोस्ती हो गई।

महाराज ने पद्मिनी की कहानी सुनी तो उनकी आँखें भर आईं। उन्होंने तुरंत ही जोरावर का कर्ज चुकाने और उसे आजाद करने का हुक्म दिया।

अपने भाई को कैद और ऋणमुक्त देखकर पद्मिनी की खुशी का ठिकाना न था। उसने महाराज का धन्यवाद किया। दोनों भाई-बहन खुशी-खुशी महाराज से विदा लेने लगे, तभी महाराज बोले, "जोरावर! आज से तुम हमारी सेना में ऊँचे पद पर रहोगे और तुम्हारी बहन पद्मिनी के विवाह की जिम्मेदारी भी हम लेते हैं।"

अंत में उन्होंने पद्मिनी का विवाह वीर और साहसी नायक रामसिंह से कर दिया तथा महाराज ने अपनी सेना में रामसिंह को एक ऊँचा ओहदा विवाह के तोहफे के रूप में दिया।

इस प्रकार अपने साहस के बल पर पद्मिनी ने भारत के इतिहास में अपना नाम स्वर्णाक्षरों में लिखवा लिया।

साहसी योद्धा पृथ्वीराज चौहान

झुका नहीं दुश्मन के आगे दे दी अपनी जान,
राजाओं का महाराजा था पृथ्वीराज चौहान।

साहस और शौर्य की अनोखी मिसाल पृथ्वीराज चौहान का नाम इतिहास में आज भी वीर योद्धा के रूप में जाना जाता है।

बात उस समय की है, जब हिंदुस्तान के राजे-महाराजे आपस में लड़ाई-झगड़े में फँसे थे। भारत की एकता व अखंडता पर प्रश्नचिह्न लग रहे थे। उस समय सूबेदार मुहम्मद गोरी अत्यंत महत्त्वाकांक्षी था। वह एक विशाल साम्राज्य का शासक बनना चाहता था। वह जानता था कि इस समय भारत की राजनीतिक स्थिति उसके अनुकूल है। अतः उसने अपने साम्राज्य में पंजाब राज्य को मिलाने के लिए भारत का रुख किया।

धीरे-धीरे अपनी विशाल और शक्तिशाली सेना के साथ मुहम्मद गोरी ने मुल्तान, सिंध, पंजाब तथा भटिंडा को अपने साम्राज्य में मिला लिया। अब उसका अगला निशाना दिल्ली, अजमेर थे।

उस समय दिल्ली और अजमेर पर वीर पृथ्वीराज चौहान का शासन था। पृथ्वीराज अपने साहस और शौर्य के कारण दूर-दूर तक प्रसिद्ध था।

जब पृथ्वीराज को गोरी के नापाक इरादों की भनक लगी तो उसने दिल्ली के सामंत गोविंदराज को मुहम्मद गोरी से लड़ने के लिए भटिंडा भेज दिया।

दोनों ओर की सेनाओं में घमासान युद्ध छिड़ गया। राजपूत योद्धाओं की तलवारें म्यान में निकलते ही मुगलों के खून की प्यासी हो गई थीं। तलवारें मुगलों को गाजर-मूली की तरह काट रही थीं।

गोविंदराज और मुहम्मद गोरी अब युद्ध में आमने-सामने आ चुके थे। दोनों अपनी बरछी से युद्ध करते और ढाल से बचाने का प्रयास करते। इसी बीच मुहम्मद गोरी की बरछी से अचानक गोविंदराज घायल हो गए, लेकिन गोविंदराज सँभले और अपनी बरछी का एक जोरदार वार मुहम्मद गोरी पर कर दिया।

गोविंदराज की बरछी से मुहम्मद गोरी बुरी तरह घायल हो गया। तभी कुछ मुगल सैनिक घेरा बनाकर मुहम्मद गोरी को युद्धक्षेत्र से बाहर ले गए।

मुहम्मद गोरी को युद्धक्षेत्र में न पाकर उसकी सेना की हिम्मत टूटने लगी और वे मैदान छोड़कर भागने लगे।

इस युद्ध में मुहम्मद गोरी बुरी तरह बौखला गया। उसने युद्ध के मैदान से भागे हुए सैनिकों को कड़ी-से-कड़ी सजा सुनाई और कहा, "आज मैं सभी सैनिकों को आगाह कर रहा हूँ कि युद्ध में जाने का मतलब जीतना या मर जाना होगा और जो भी सैनिक युद्ध छोड़कर भागेगा, उसे मौत की सजा दी जाएगी।"

मुहम्मद गोरी का आदेश सुनते ही सभी सैनिक खाना-पीना, घर-परिवार छोड़कर अपनी ताकत बढ़ाने में जुट गए। उन्हें मालूम था कि

यदि हमने युद्ध में पीठ दिखाई तो मुहम्मद गोरी हमारा नर्क से भी बुरा हाल कर देगा। अतः युद्ध में पीठ दिखाने का ख्याल सभी सैनिकों ने अपने दिल से निकाल दिया।

उधर पृथ्वीराज चौहान अपनी जीत का जश्न मना रहा था। तभी एक गुप्तचर ने आकर कहा, "महाराज! मुहम्मद गोरी अपनी सेना को और भी मजबूत बनाने में लगा है। वह कभी भी दोबारा हम पर आक्रमण कर सकता है। अतः हमें भी सतर्क रहना होगा।"

"वह चूहा गोरी हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकता। अभी तो वह इस लड़ाई से उबरा भी नहीं होगा। फिर वह दोबारा हम पर आक्रमण की सोच भी नहीं सकता।" पृथ्वीराज चौहान ने अपनी सेना पर गर्व करते हुए कहा।

. पृथ्वीराज चौहान की पत्नी संयोगिता को भी इस बात का पता चल चुका था। संध्या के समय जब पृथ्वीराज अपने कक्ष में विश्राम के लिए आए तो संयोगिता बोली, "नाथ! जश्न को छोड़कर आप अपनी सैन्य शक्ति पर ध्यान दें। दुश्मन को कभी भी कमजोर नहीं समझना चाहिए और मेरा हरण करके आपने मेरे पिता को भी नाराज कर दिया है, अतः आपसे विनती है कि आप पिताजी को मनाने के साथ-साथ अन्य राज्यों के पास भी संधि का प्रस्ताव भेज दें, ताकि मुहम्मद गोरी की विशाल सेना को हरा सकें।"

पृथ्वीराज बोले, "अभी मेरी तलवार की प्यास बुझी नहीं है, मेरी

भुजाओं में अभी इतनी शक्ति बाकी है कि मुहम्मद गोरी जैसे कई मुगलों को धूल चटा सकता हूँ।"

गुप्तचर की बात सही निकली। एक वर्ष बाद मुहम्मद गोरी फिर युद्ध के मैदान में आ डटा, जहाँ उसने पहली बार हार का स्वाद चखा था।

पृथ्वीराज चौहान ने युद्ध करने से पहले मुहम्मद गोरी को एक बार समझाना उचित समझा और अपने दूत के हाथों मुहम्मद गोरी को एक पत्र भिजवाया, जिसमें लिखा था, "तुम हमारी ताकत और तलवारों का स्वाद चख चुके हो। अतः हम तुमको चोतावनी देते हैं कि अपनी सेना लेकर यहाँ से चले जाओ। हम तुम्हें कुछ नहीं कहेंगे, अन्यथा राजपूतों की प्यासी तलवारें तुम्हारे सैनिकों में एक बूँद खून भी नहीं छोड़ेंगी।"

मुहम्मद गोरी ने भी पृथ्वीराज के उस पत्र का उत्तर तुरंत भिजवा दिया, जिसमें लिखा था, "आपकी शुभकामनाएँ मुझे मिल चुकी हैं। इसके अतिरिक्त हमारे पास और कोई चारा नहीं है, क्योंकि हम आपके योद्धाओं की ताकत को जान चुके हैं, अतः मैं अपने भाई तक आपका संदेश पहुँचा दूँगा, क्योंकि उनके कहने पर ही मैं यहाँ आया हूँ।"

मुहम्मद गोरी का संदेश सुनकर पृथ्वीराज उसकी ओर से निश्चिंत हो गया और अपनी सेना को विश्राम के लिए भेज दिया।

अगले दिन अभी सूरज ठीक से निकला भी नहीं था कि मुहम्मद गोरी ने अपनी विशाल सेना के साथ राजपूतों पर हमला बोल दिया। इस समय राजपूत सैनिक बेखबर सो रहे थे। अचानक हुए इस हमले से हजारों

राजपूतों को अपनी जान से हाथ धोना पड़ा।

अगले दिन दोनों ओर की सेनाएँ पूरी तैयारी के साथ युद्ध के मैदान में आ डटीं। दोनों ओर से घमासान युद्ध छिड़ गया। कभी राजपूत योद्धा मुगलों पर भारी पड़ते तो कभी मुगल सैनिक राजपूतों पर हावी हो जाते। इस लड़ाई में राजपूत सैनिक अधिक मारे जा रहे थे, क्योंकि मुहम्मद गोरी के पास अधिक सैनिक थे, जिन्हें वह रोक-रोककर युद्ध में भेज रहा था, ताकि पहले सैनिक आराम कर सकें और दोबारा जोश के साथ लड़ें।

अगले दिन गुप्तचर ने सूचना दी कि आपसी बैर के चलते महारानी के पिता भी गोरी के साथ मिल चुके हैं।

पृथ्वीराज को अब संयोगिता के कहे शब्द स्मरण हो आए थे, लेकिन समय हाथ से फिसल चुका था।

तीसरे दिन दोनों ओर से घमासान युद्ध छिड़ चुका था। सुल्तान गोरी की सैनिक शक्ति अब दोगुनी हो गई थी।

लेकिन पृथ्वीराज अब भी अपने जाँबाज योद्धाओं के साथ युद्धभूमि पर डटा हुआ था।

अचानक खबर मिली कि पृथ्वीराज का सेनापति खांडेराव युद्ध में वीरता के साथ लड़ता हुआ मारा गया।

पृथ्वीराज ने तुरंत हाथी से उतरकर घोड़े की लगाम थाम ली और राजपूती सेना का नेतृत्व करने लगे।

पृथ्वीराज ने इस युद्ध में अपने साहस और शौर्य का जौहर दिखाते हुए

हजारों मुगल सैनिकों को मौत के घाट उतार दिया।

एक बार तो पृथ्वीराज का साहस और युद्धकौशल देखकर मुहम्मद गोरी के पैर उखड़ गए थे। लेकिन कुछ देर बाद ही मुहम्मद गोरी के सैनिकों ने पृथ्वीराज को चारों ओर से घेर लिया। सारे राजपूत योद्धा मारे जा चुके थे या बंदी बना लिए गए थे।

काफी समय तक साहस और वीरता से लड़ने के बाद पृथ्वीराज चौहान वीरगति को प्राप्त हो गए।

भारतवर्ष के इतिहास में आज भी इस वीर योद्धा का नाम आदर व सम्मान के साथ लिया जाता है और हमेशा लिया जाता रहेगा।

□□□
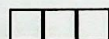
मनोरंजक एवं ज्ञानवर्धक
सचित्र बाल-साहित्य

ISBN 978-93-80186-47-4

विद्या विहार
नई दिल्ली